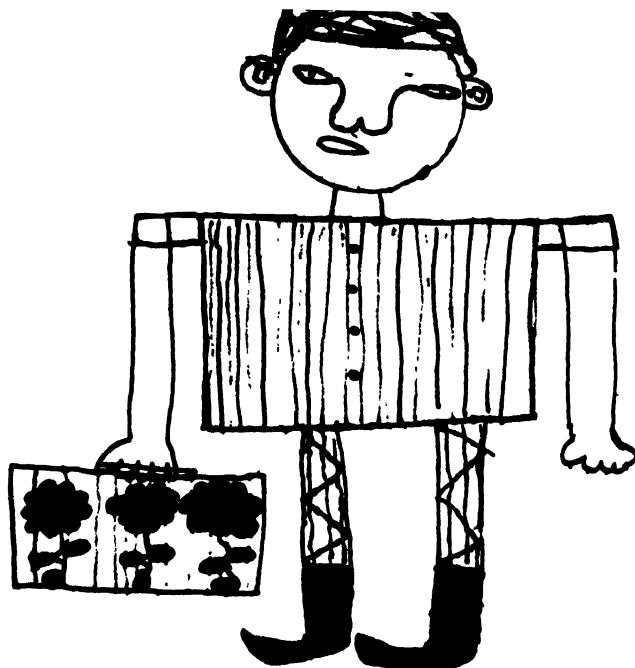


पास्तन, साहे चार वर्ष, टीकमगढ़



इस अंक में...

विशेष

22 समय की माप : परछाई से परमाणु
तक

कविताएं

15 ओस
20 होली

कहानी

7 घड़ियों की हड्डताल
धारावाहिक

31 भूगर्भ की यात्रा

हर बार की तरह

- 3 मेरा पन्ना
- 12 तुम भी बनाओ
- 16 चित्र कथा
- 18 खेल कागज़ का
- 19 दुनिया पक्षियों की
- 30 कैलेडर में गणित
- 34 अपनी प्रयोगशाला
- 37 दर्पण के संग खेलो
- 38 माथा पच्ची

और यह भी

- 2 पाठक लिखते हैं!
- 13 चित्रकला के इतिहास से

चकमक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष 6 अंक 8 फरवरी, 1991

संपादक

विनोद, राधा

सह-संपादक

राजेश उत्ताही

कविता सुरेश

कला

जया विवेक

उत्पादन/वितरण

हिमांशु विस्वास, कमलसिंह

चकमक का चंदा

एक प्रति: चार रुपए

छमाही : बीस रुपए

वार्षिक : चालीस रुपए

डाक खर्च मुफ्त

चंदा, मनीआंडर या बैंक ड्राफ्ट से

एकलब्ध के नाम पर भेजें।

कृपया चंदा न भेजें।

पत्र/चंदा रखना भेजने का पता

ई-1/208, अरेंगा कॉलोनी,

भोपाल-462 016 (म.प्र.)

फोन: 563380

कागज़ : 'यूनिसेफ' के सौजन्य से।

स्कूल्योग : राष्ट्रीय विज्ञान व प्रौद्योगिकी

संचार परिषट् (विज्ञान व प्रौद्योगिकी

विभाग, नई दिल्ली)

आवरण : सतीश

आवरण पर छढ़ी के डायल में अंकों के स्थान पर समय मापने के विभिन्न
तरीकों का विवरित होता एक क्रम दर्शाया गया है।

एकलब्ध एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलब्ध द्वारा
प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्यनाशीलता,
कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

लड़कियां ही खाती हैं सखकी लड़कियां।

“अख्लार के अब्बा कौन?” बालिका वर्ष में बालिकाओं की समस्याओं की ओर ध्यान इंगित करने का अनूठा व सराहनीय प्रयास लगा।

निश्चय ही अख्लार खुशनसीब है कि वह उस परिवार या मां का बेटा है जहां वह अपनी मां को समाज में प्राथमिकता या सर्वोच्चता दे सकता है। लेकिन ऐसे अख्लार कितने हैं? बस अंगुलियों पर गिने जा सकने वाले।

यह न जाने कैसी परम्परा हमारे देश की संस्कृति में शामिल है कि जहां लड़कियों को पीछे ही धकेला जाता है। आश्वर्य तो तब होता है जब ऐसा काम खुद लड़कियों, महिलाओं यानी मांओं द्वारा सम्पन्न होता है।

असली बात तो यह है कि कई पालक लड़कियों को पढ़ाना ही गैर ज़रूरी समझते हैं। लड़कियों का घेरेलू कामकाज करना और उनमें दक्षता प्राप्त करना वे ज्यादा ज़रूरी समझते हैं। इसके अलावा ज्यादातर पालकों को लड़के-लड़कियों का साथ-साथ पढ़ना भी पसंद नहीं होता।

लड़कियां चाहती हैं खूब पढ़ें, डिग्रियां लें, खेलकूद में नाम रोशन करें सृजनात्मक काम करें, लेकिन यह सब तो भारतीय समाज में जैसे लड़कों के लिए सौ प्रतिशत आरक्षित है।

□ कुट्टन राठौड़, मंडलाडा, प. निवाड़;
अधिनी पंडित, संजीव पंडित, समसीपुर

खेद है.....

जनवरी, 91 अंक में पृष्ठ 15 पर प्रेगोरियन ‘कैलेंडर यानी आज का कैलेंडर’ उपशीर्षक का पहला पैराग्राफ पूरा प्रकाशित नहीं हुआ है। हमें इसका खेद है। पैराग्राफ इस तरह पढ़ें—

‘जूलियन कैलेंडर की उक्त गड़बड़ के कारण कैथोलिक चर्च वाले अधिक चिंतित थे। क्योंकि इस गड़बड़ के रहते ईस्टर के त्योहार का खिसकते-खिसकते सर्दियों में पहुंच जाना संभव था। ईस्टर वसंत में मनाया जाता था और धार्मिक नेता इस परंपरा के बनाए रखना चाहते थे।’

पाठक लिखते हैं

की पूरी खत्रता मिलेगी।

□ प्रिथ्वीश कुमार, तिसाओरा, बिहार दिसंबर, 90 के अंक में नाटक ‘नजानू कवि बना’ बहुत अच्छा लगा।

□ दिवाकर मिश्र, वास्टरगंगा, बसी, उ.प्र.
परसपाल, रामनगर, सरगुजा, उ.प्र.

दिसंबर अंक में ‘आकाश की छतरी में छेद’ और ‘अख्लार के अब्बा कौन?’ बहुत ही पसंद आया। ओजोन के छेद के बारे में मैंने अपनी बड़ी बहन से भी जानकारी ली। इससे मुझे पता चला कि 0₃ की सतह को हटाने में आटोमोबाइस के धुएं का भी हाथ है। सिर्फ CFC के प्रयोग न करने से ही हम 0₃ की छतरी को नहीं बचा सकते। इसे रोकने के लिए हमें आटोमोबाइस का प्रयोग भी कम करना पड़ेगा।

□ श्रुति अरोड़ा, साहिबाबाद, उ.प्र.

□ हरिजसाद सैनी, फतेहपुर

एक चिट्ठी ज्यों की त्यों.....

कार्यालय, बालक प्राथमिक विद्यालय, पारसेन, खालियर, म.प्र.

आदरणीय संपादक जी,

26/12/90

जयहिंद

विवशता ने चारों तरफ से जकड़ दिया, लाचार होकर आज लेखनी द्वारा अपने विचार आप तक पहुंचाने के लिए पत्र लिखना ही पड़ा। एक ही भवन में, एक ही समय पर शासकीय माध्यमिक विद्यालय पारसेन एवं शासकीय बालक प्राथमिक विद्यालय पारसेन साथ-साथ लगते हैं। माध्यमिक विद्यालय पारसेन में 200 छात्र हैं एवं प्राथमिक विद्यालय में 250 छात्र हैं। माध्यमिक विद्यालय पारसेन के नाम से आपके यहां से एक पत्रिका आती है।

दिसंबर सन् 1990 की चकमक पत्रिका पोस्टमेन द्वारा सुबह विद्यालय समय से पूर्व विद्यालय प्रांगण में बैठे छात्रों को दी गई। प्राथमिक विद्यालय के नहे-मुन्ने छात्र धूप में बैठे इस चकमक पत्रिका को पढ़ रहे थे। शिक्षकगण उस समय नहीं आ पाए थे। थोड़ी देर में माध्यमिक विद्यालय के छात्र आ गए। उन्होंने उन नहे-मुन्ने छात्रों के हूँड में जाकर देखा कि ये सारे बच्चे चकमक पढ़ रहे हैं, तो वे अकड़कर कहने लगे कि यह चकमक हमारे स्कूल की है, तुम्हरे स्कूल की नहीं।

चकमक की झगटा-झगटी के बाद वे आपस में लड़ गए, एक-दूसरे के कपड़े फाड़ दिए। कुछ छात्रों ने एक-दूसरे से पथरबाजी की, अधिकांश छात्र लह-लुहान हो गए। छात्रों के दोनों गुटों ने बड़ा रूप चकमक पत्रिका के आधार पर लिया। जब तक संस्था के शिक्षकगण एवं मैं स्वयं भी पहुंच गया। झगड़े को शांत किया। ऐसी विषम परिस्थिति के कारण आज पत्रिका हेतु आपको यह पत्र लिखना ही पड़ा।

विद्यालय में ऐसे के बजट का प्रावधान नहीं है, निशुल्क शिक्षा दी जाती है। अगर आपके यहां निशुल्क पत्रिका भेजने का कोई रूप हो तो अवश्य निश्चाकित पते पर नहे-मुन्ने छात्रों की अभिलाषा पूर्ण करने हेतु आवश्यक रूप से एक पत्रिका प्रतिमाह भेजने की कृपा करिए।

□ प्रधानाध्यापक, प्राथमिक विद्यालय, पारसेन, खालियर, म.प्र.

हमने गुड़ खाओ

एक दिन मैं उर (और) मेरो बड़ो भैया घर में थे। मेरी बाई घर में नई थी। उर मेरे दाऊ बी (भी) घर में नई थे। वे खेत में काम कर रहे थे। दाऊ बखर हांक राए थे। उर बाई फरें बीन रई थीं।

मेरो बड़ो भैया बोलो, “यार मनमोहन अपने घर की कुटिया में गुड़ धरो है। तू कोई से नै कहे तो अपन दोई खालें।”

मैंने बी कही, “खालो भैया मनो मोहे भी मुतको दैयो।”

तई उन्हे कही, “हओ।”

हमने गुड़ निकारो उर खान लगे। अब उते से बाई आ रई थीं। मैंने दूरई से देख लई।

मैंने भैया से कही, “ये देख तो भैया मोसे जो गुड़ तो खुवा नई रयो। जाहे तुमई खालो।”

तई बे बोले, “हओ।”

उर मैं गुड़ उनकी थरिया में धर के बहार आ गयो। बड़े भैया ने तो बाई हे देखी नई थी। वे तो निरभय होके खा रए थे जैसेई बाई घर आई मैंने कह दई, “ओ बाई बड़ो भैया घर में गुड़ खा रयो है।”

बाई बोली, “कहां है बो?”

तई मैंने कही, “बो तो देख लो घर में छुसो-छुसो खा रयो है।”

जैसेई बाई घर में गई मैंने बड़े भैया के डर से कक्ष के घर की गैल धर लई। बाई ने बड़े भैया हे खूब गारी दई।

वे बोलीं, “नासमिटे कच्छ नई बचन देवे। अबे गुड़-मुड़ बढ़ा गयो तो और कहां से लाहें। अब बजार है पूरे चार दिना बाद। चाय-माय काय की बन है। शकर बी तो कंटरोल में नई मिली। काय रे तू रोटी नई खा सकत थो?”

अब भैया की मुझ्यां उतर गई वे फुस्फुसाके बोले, “मैंने अकेले ने थोरु खाओ है बाने बी तो खाओ है।”

तई बाई बोली, “काय रे तू तो बड़ो है। जब तूने खाओ हुहै तब वो तो खै है।”



इंदरसिंह, सातवीं, पीपल्या मंडी, मंदसौर

तब तक तो मैं धीर-धीरे कक्ष के आंगन से बहार होके सब सुन रयो थो फिर मैं बोलो, “ए बाई सुनो अब तुमई देखो मैंने खाओ होतो तो मैं तुमसे कह देतो।”

तई बाई बोली, “हां रे तू का कम है।”

मैंने मन में सोची मेरी सफाई काम नै आई उर मैं फिर कक्ष के घर चलो गयो।

कक्षहुन को उर हमारे घर जोरे जोरे (पास-पास) तो थे ही वे हमरी पूरी बातें सुन रए थे। उने मोहे बुलाओ उर बोले, “यार मनमोहन हमें एक चरू पानी तो लान दो।”

मैं सहज भोरे चरू में पानी लेके पोंच गयो तब वे बैलों की सार में खटिया पे बैठे बैठे तमाखू बना रए थे। उन्हे चरू के संग में मेरो हाथ बी पकड़ लयो, उर मुस्काए के बोले, “तूने बी गुड़ खाओ थो सच्ची बता।” तई मैं हिनहिना के बोलो, “कक्ष जी मैंने तो तब्रक सो खाओ है।”

वे बोले, “खइए रामधई।”

तई मैंने बी बचबे के मारे रामधई (रामकसम) खा लई।

वे बोले, “तूने तब्रक सो खाओ होय चाय मुतको सो, खाओ तो है। तू तो बच गयो उर बो उते गारी खा रयो है।

इती बात केत हुए उन्हे मेरे गाल में एक थप्पड़ मारो। तो हमने गुड़ भी खाओ और थप्पड़ बी।

□ मनमोहन सिल्लने, सर्वी, तालनगर, होशंगाबाद

आम की खोज

एक समय की बात है। हम लोग आम की खोज करने के लिए बगिया में गए। समय रात के दो बजे चुके थे। बगिया में जाकर हम लोगों को कम से कम 80 आम मिले। तब हम लोग अपने-अपने घर आए। सुबह मां ने हमसे पूछा कि इतने सारे पके हुए आम कहां से आए? हमने कहा कि बगिया में से हम आम लाए हैं। तब मां डर गई और कहने लगी कि इतनी रात को तुम बगिया में गए तुमको डर नहीं लगा। तब हमने मां से कहा कि मैं अकेला नहीं गया था, मेरे साथ रमेश, विनोद, प्रमोद, कहैया भी गए थे। मां ने सबको बुलाया और कहने लगी कि रात में तुम सब आम खोजने क्यों गए बगिया में, अब मत जाना। इसलिए कि वहां बहुत बड़ा सांप रहता है। तुम सब को पकड़ लेगा।

यह सब बात बताकर मां भोजन बनाने के लिए चली गई। तब हम सब बच्चे अपने में बात कर रहे थे कि अबकी बार बगिया में फिर चलें और वहां सांप होगा तो हम सब उसे मार देंगे। हम लोग यह सब बातें कर ही रहे थे कि उसी समय यह सब बातें सुनते हुए पिता जी आ गए और हम लोगों से कहने लगे कि बगिया में मत जाना।

हम लोग उसी रात को हाथ में टार्च और लाठी लेकर बगिया की ओर चल पड़े। वहां जाने पर एक भी सांप का नामो-निशान तक नहीं मिला। तब कहैया ने कहा कि गोपाल भैया की मां हम लोगों को डरा रहीं थीं कि हम लोग बगिया में न जाएं। लेकिन ऐसा थोड़े ही होगा। हम लोग आम चुनना छोड़ देंगे? वहां

आकर दनादन आम चुनना शुरू किया। उस दिन भी 80 आम मिला। जब हम सबों के झोले भर गए तो हम सड़क की ओर से अपने घर की ओर आ रहे थे कि एकाएक बहुत-सी रोशनी हम लोग की आंख पर आई। हम लोग डर कर भागने लगे।

डकैतों का डर था। इसलिए कि हमारे गांव में दस रोज़ पहले एक राय जी के घर में डकैती हुई थी। जब हम डर के मारे भाग रहे थे तो वो सब पीछा करने लगे। भागते-भागते अपने घर आए। हम सब इतनी ज़ोर से भागे कि आम का थैला कहां गिर गया कुछ पता नहीं चला।

हम लोग गांव में आकर कहने लगे कि डकैत हमारे गांव के आस-पास आ गए हैं। हमारे गांव के लोग ईटा-पत्थर लेकर तैयार थे कि डकैत यदि आ जाएंगे तो मुकाबला डट कर होगा। वे लोग हमारे घर के आस-पास आ गए और हम सब को खोजने लगे। सब शैतान लड़के कहां गए?

थोड़ी देर के बाद पता चला कि वो चोर नहीं पुलिस है। तब हम लोग उनके पास गए तो वे कहने लगे कि इतनी रात को तुम बगिया में क्यों गए थे? हम लोगों ने कहा कि आम खोजने के लिए बगिया में गए थे। वो कहने लगे आधी रात को बगिया में मत जाना, नहीं तो अच्छा नहीं होगा।

दरोगा जी कहने लगे कि यह सब लड़के इतने शैतान हैं कि हम लोग को हैरान कर दिया। दरोगा जी जब गिर पड़े थे और उनके पेट में चोट आ गई थी। तब उन्होंने कहा कि गोली चलाओ, लेकिन अच्छा हुआ कि पुलिस ने गोली नहीं चलाई। तब दरोगा जी ने कहा कि तुमने तो हैरान कर दिया लेकिन ऐसा अब मत करना।

दरोगा जी ने कहा कि तुमने तो खूब दौड़ाया अब ज़रा पानी पिलाओ। तब हमने दरोगा जी को चार ग्लास पानी पिलाया। फिर दरोगा गए दक्षिण दिशा में गश्त करने और हम अपने-अपने घर गए। तब हमारे गांव के लोग कहने लगे कि यह सब लड़के इतना बदमाश हैं कि दरोगा जी को भी परेशान कर दिया। तब हम लोग अपने घर जाकर सो गए।

हम सर के कक्षा

एक हमारी थी कैलारस में शाला
उसमें हम पढ़ने जाते हैं!
तो उसमें घुण्य जैसे टीचर
हमें पढ़ना सिखाते हैं!

एक दिन हमारे सर ने
कहा था अ आ
तो हमने कह दिया था
हम सर के कक्षा!

उन्होंने हमारी कर दी पिटाई
हमने छोड़ी पड़ाई!

□ सुरेश अंद्र रावत, दसवीं, लहरा, मुरैना



मोहनलाल, सालवी

काली को चढ़ा नशा

हमारे गांव में एक दिन एक आदमी ने भांग और दूध डालकर खोआ बनाया। उसने अपनी छोटी बहन को थोड़ा-सा खिला दिया। उसकी बहन का नाम काली था। काली को बहुत अच्छा लगा। काली ने बाद में चुपके से थोड़ा और खा लिया।

काली को नशा चढ़ गया और उसका सिर झूमने लगा। ओझा भगत को बुलाया गया कि काली पर भूत सवार है। भगत ने आकर बताया कि काली को बहुत बड़ा भूत धर लिया है।

काली ने हाथ से इशारा किया कि मैंने खोआ खा लिया है। ओझा ने कहा कि भूत मुर्गा मांग रहा है।

एक ओझा से ठीक नहीं हुआ तो गांव के दो ओझा और बुला लिए गए। ओझा आकर काली को रस्सी से बारी-बारी से मारने लगे। तभी एक समझदार आदमी ने तीनों ओझाओं को भगाया और काली को सुला दिया।

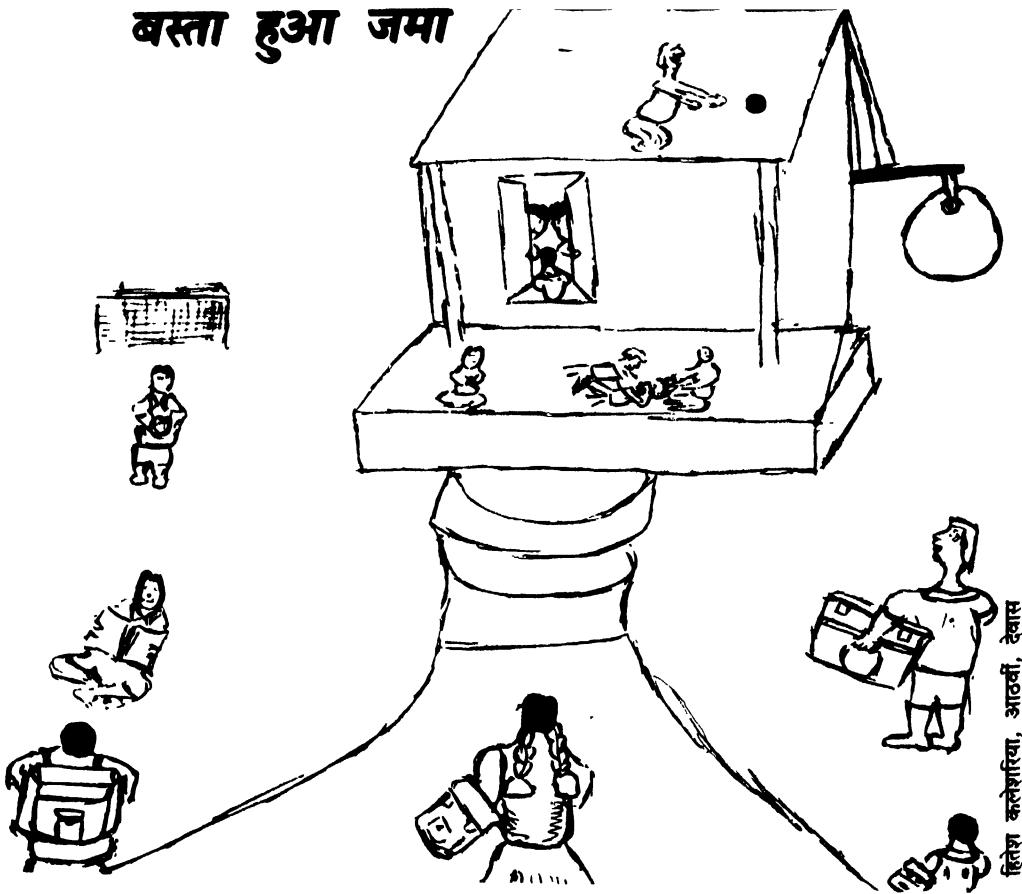
सुबह तक काली का नशा तो उतर गया लेकिन मार का दर्द हो रहा था। उसने बताया कि मैंने भांग खा ली थी।

फिर गांव के लोगों ने मिलकर तीनों ओझाओं को भगा दिया।

□ अर्जुन कुमार, आठवीं, सरसी, पट्टा

चक्रमंक

ਬਸਤਾ ਹੁਆ ਜਮਾ



ਦੇਵਾਨ
ਆਠਵੀ,
ਕਲੋਸਟਰਿਚਾ,

ਜब ਮੈਂ ਪਹਲੀ ਕਲਾ ਮੈਂ ਪਢਤਾ ਥਾ, ਤੋ ਮੁੜੇ ਬਹੁਤ ਡਰ ਲਗਤਾ ਥਾ।

ਮੇਰੇ ਪਿਤਾਜੀ ਮੁੜੇ ਪਕੜਕਰ ਸ਼੍ਰੂਲ ਲੇ ਗਏ, ਤੋ ਮਾਸ਼ਾਬ ਨੇ ਕਹਾ ਕਿ, “ਕਿਧੋ ਰੋ ਰਹਾ ਹੈ?”

ਤੋ ਮੁੜੇ ਔਰ ਡਰ ਲਗਾ। ਮੁੜੇ ਲਗਾ ਕਿ ਗੁਰੂਜੀ ਏਕ ਲਾਠੀ ਨ ਮਾਰ ਦੇਂ, ਤੋ ਮੈਂ ਚੁਪ ਹੋ ਗਿਆ। ਫਿਰ ਮੈਂ ਜੋ ਕੁਛ ਲਿਖਾਤਾ ਥਾ ਤੋ ਗੁਰੂਜੀ ਕੋ ਦਿਖਾ ਦੇਤਾ, ਗੁਰੂਜੀ ਪ੍ਰਸ਼ੰਸਨ ਹੋਤੇ ਥੇ।

ਜਬ ਮੈਂ ਕਲਾ ਛਹ ਮੈਂ ਪਢਨੇ ਲਗਾ ਤੋ ਮੈਨੇ ਏਕ ਲਡਕੇ ਕੋ ਮਾਰ ਦਿਯਾ। ਗੁਰੂਜੀ ਨੇ ਮੇਰੀ ਪਿਟਾਈ ਕਰ ਦੀ। ਮੈਨੇ ਪੀਰਿਯਡ ਗੋਲ ਕਰ ਦਿਯਾ। ਫਿਰ ਗੁਰੂਜੀ ਨੇ ਮੇਰਾ ਬਸਤਾ ਸ਼੍ਰੂਲ ਮੈਂ ਜਮਾ ਕਰਵਾ ਦਿਯਾ।

ਜਬ ਮੈਂ ਸ਼੍ਰੂਲ ਆਯਾ ਤੋ ਮੇਰਾ ਬਸਤਾ ਨਹੀਂ ਮਿਲਾ। ਮੈਂ ਘਬਰਾਵਾ, ਤੋ ਏਕ ਲਡਕੇ ਨੇ ਮੁੜੇ ਕਤਾ ਦਿਯਾ ਕਿ ਗੁਰੂਜੀ ਨੇ ਤੇਰਾ ਬਸਤਾ ਜਮਾ ਕਰ ਦਿਯਾ ਹੈ।

ਮੈਨੇ ਸੋਚਾ ਗੁਰੂਜੀ ਮਾਰੇਂਗੇ। ਤੋ ਫਿਰ ਮੈਨੇ ਸੋਚਾ ਚਲੋ ਮਾਰ ਘਲ ਜਾਏਗੀ ਤੋ ਘਲ ਜਾਏਗੀ। ਮੈਂ ਚਲਾ ਗਿਆ।

ਗੁਰੂਜੀ ਨੇ ਪ੍ਰਭਾ ਕਿ, “ਕਹਾਂ ਗਏ ਥੇ?”

ਮੈਨੇ ਕਹਾ, “ਮੁੜੇ ਭੂਖ ਲਗੀ ਥੀ ਤੋ ਖਾਨਾ ਖਾਨੇ ਗਿਆ ਥਾ।” ਗੁਰੂਜੀ ਨੇ ਕਾਨ ਪਕੜਕਰ ਊਠਕ-ਬੈਠਕ ਲਗਵਾਈ ਔਰ ਬਸਤਾ ਦੇ ਦਿਯਾ।

घड़ियाँ की हड्डताल

१९८४।

शहर में हड्डताल का मौसम था। रेलवालों ने रेलें चलानी बंद कर दी थीं। हजारों मुसाफिर प्लेटफार्म पर अटके पड़े थे। हर दूसरे पल वे एक-दूसरे से पूछते थे, “हड्डताल खुली क्या?” एक हड्डताल खुलने का नाम नहीं लेती थी कि उससे पहले ही दूसरी हड्डताल का नोटिस आ जाता था।

इधर एक चमत्कार हुआ। खरबूजे को देखकर खरबूजे ने रंग बदला। हड्डताल का मौसम पूरे जोश-खरोश से आ पहुंचा था इसलिए शहर की सारी घड़ियाँ ने भी आपस में राय मिलाई। सबका मत था कि उनको समय के साथ चलना चाहिए। राय मिल जाने के बाद देर कैसे हो सकती थी। सारे शहर की घड़ियाँ हड्डताल पर चली गईं। समय जहां था, वहीं ठहर गया।

जो मिनिस्टर लोग मीटिंगों में बैठे थे, वहीं बैठे रह गए। एक-दूसरे से समय पूछने लगे तो सबने पाया कि सबकी घड़ियाँ रुकी पड़ी हैं। तुरंत दरबान बुलाए गए। सही समय की तलाश में दौड़ाए गए। ‘सही समय’ लेकिन सबके हाथ से निकल गया था। दरबान भी निराश होकर लौटे, सबने आकर खबर दी कि सबकी घड़ियाँ ठहरी खड़ी हैं।

हुक्म हुआ कि घड़ीसाज बुलाए जाएं। सरकारी हुक्म सरपट दौड़ा। घड़ीसाज दौड़े आए। खबर लाए कि उनके यहां भी सारी घड़ियाँ रुकी खड़ी हैं। शहर के नामी घड़ीसाज ने घंटाघर के टॉवर पर चढ़कर पेंडुलम हिलाया—धूप के अंदाज से सूई मिलाई और गर्दन ऊंची किए देखता रहा कि सूई आगे सरकती है क्या। सूई जहां-की-तहां डटी थी। ...ज़रा भी सरकने का नाम न लेती थी।

इधर समय ठहर गया था, उधर फैसले ठहर गए थे। मंत्री महोदय एक से दूसरी सभा तक नहीं पहुंच सके। समय के साथ सभाएं रुक गईं। सभाओं के साथ सफाई कर्मचारियों, डॉक्टरों और रेलें चलाने वालों की किस्मत जुड़ी थी, वह भी वहीं ठहर गई।

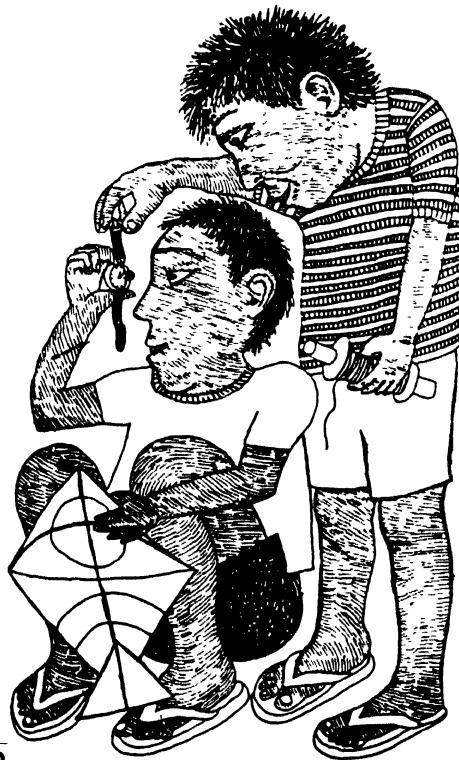
शहर की घड़ियाँ ठहरी खड़ी थीं। कर्मचारियों की किस्मत रुकी पड़ी थी। मगर गली-कूचों में बच्चों की किलकारियां छूट पड़ीं थीं। सब अपनी खुशी बांट रहे थे। मोटू कह रहा था, “यार, अपनी तो किस्मत

चमक गई। आज दोपहर तक सोते रहे, किसी ने कान नहीं उमेठा। किसी को हमें जगाने की नहीं सूझी। सोने की ऐसी मौज मिल जाए तो फिर क्या।” मोटू अपने सोए रहने की बात बड़ी शेखी से सुना रहा था मगर मन-ही-मन घड़ियों को दाद दे रहा था। सोच रहा था घड़ियां ऐसे ही रुकी रहें—और अपनी नींद सलामत रहें।

मोटू का दूसरा भाई था खोटू। उसे खेलने का खूब शौक था। वह भी जब से घड़ियां ठहर गई हैं तब से धंटों खेलता रहा है। किसी को उसे बुलाने की नहीं सूझती। वह भी अपनी खुशी में लोट-पोट हो रहा था और हफ्ता हुआ बता रहा था, “देख, देख, अपनी क्या लाइफ बनी है। मझे से खेल जमा रहे हैं। न मम्मी की आवाज बुलाती है और न स्कूल की धंटी। घड़ियां खुद तो चुप हुई हीं, अच्छों-अच्छों को भी चुप कर दिया।”

“अबे, ज्यादा शान मत मार। साले को खेलने का मौका मिल गया तो अब अपनी ही छोटे जा रहा है।” खोटू का एक दोस्त कह रहा था।

“देख दोस्त, अपन फालतू में नहीं छांटते हैं कुछ। ऐसा खेल जमता रहा ना, तो चार दिन बाद



अपनी सेहत भी देख लेना। फिर भी लगे कि केवल छांट रहे हैं तो कुश्ती में उतरकर देख लेना।"

कुश्ती का चैलेज सामने आते ही खोटू का दोस्त दुबक गया था। मित्रों की यह मंडली फिर खेलने में मस्त हो गई थी। खोटू के और भी बहुत सारे दोस्त ऐसे थे जिनको स्कूल की धंटी से चिढ़ थी। वे सब एक जगह आ पिले। सब मिलकर हनुमान जी को नारियल चढ़ाने की योजना बना रहे थे। मनौती मना लेना चाहते थे कि घड़ियां रुकी रहें, धंटियां बजें नहीं।

यह मंडली धंटी के बजने से इसलिए परेशान थी कि धंटी खेल के रंग में भंग डालती थी। फिर जब धंटी की चोट सुनाई देती थी जो उनको मास्टर जी के डंडे की चोट याद आ जाती थी। घड़ी की सूई और मास्टर जी के डंडे में कोई निकट का रिस्ता था। सूई समय से जितनी आगे खिसकती थी। डंडा उतना ही ज़ोर से पड़ता था। छोटे-बड़े सभी बच्चे इस डंडे से डरने लगे थे। डंडे का डर इस मंडली पर भी ऐसा सवार हो गया था कि स्कूल से दूर भागना ही सबने अपना अधिकार मान लिया था। सारी मंडली इस बात पर एक राय थी कि, "मास्टर जी अगर मारें—तो पढ़ो नहीं।"

घड़ियां जब से रुकी हैं तब से मोटू की नींद सलामत हो गई है और खोटू का खेल पक्का हो गया है। कहीं कोई रोक-टोक नहीं। किसी की दखल नहीं। तीसरे बच्चे बच्चे छोटूराम। मोटू, खोटू के छोटे भाई। इनको छोटे-छोटे किस्से-कहानियां पढ़ने का शौक है। जब से घड़ियां रुकी हैं तब से अपने घर के एक कोने में दुबके उपन्यास, किस्से-कहानियां पढ़ते रहते हैं। स्कूल

की तैयारी कर तक़ाज़ा करना मम्मी भूल गई है। खूब मज़े से धंटों तक एक कोने में दुबके पड़े रहते हैं। न कोई तक़ाज़ा, न कोई डांट-फटकार। किसी को किसी बात की चिंता नहीं।

हर समय ऐसा लगता है जैसे सारा घर देर के लिए बैठकर सुस्ता रहा है। मोटू-खोटू दोनों बाहर हैं इसलिए कोई खटपट नहीं। समय का पता नहीं इसलिए पापा को दफ्तर की देर का डर नहीं। न नाश्ता बनाने की जल्दी, न लंच-बॉक्स तैयार करने की जल्दी। पापा को भी कोई डर नहीं था कि देर हुई तो साहब बिगड़ेंगे। शहर के दूसरे सारे बाबू लोग भी दफ्तर की देर के डर से छुटकारा पा चुके थे। शहर शांत था। बसों का इंतज़ार करने वालों की कतारें छोटी हो गई थीं। भगदड़ गायब थीं।

सभी दफ्तरों का, कारखानों का, छोटी फ़ैक्ट्रियों का समय चूंकि ठहर गया था इसलिए कर्मचारियों पर किसी तरह की पाबंदी नहीं रही थी। मिल-मालिक परेशान थे। इस बार कुछ ऐसे फंसे थे कि यह भी नहीं कह सकते थे, 'बड़ा ख़राब टाइम आ गया है।' और न लंबी सांस लेकर कह सकते थे 'समय बड़ा बलवान'। जब समय ही गायब था तो दोष किसे देते।

समय यूं गायब हुआ तो शहर में सहसा समता का राज आ गया था। सच्चा समाजवाद आ गया था। छोटे-बड़े सभी लोग अपने दिनमान की डोर से कट गए थे। भाग्यवाद के फंदे से बच गए थे। बड़े-बड़े भाग्यवादी छकड़ी भूल गए थे। भविष्य बेचनेवालों का कारोबार ठप्प था। दिनमानी दूकानें बंद थीं। मीन-मेख का अंतर भी मिट गया था।





उधर समय के यूं गायब हो जाने से अफसरों, मैनेजरों व मिल-मालिकों की हालत अजीब हो गई थी। एक बड़ी कंपनी के मैनेजर साहब को घड़ी की अलार्म से उठने की आदत थी। घड़ियां सब ठहरी खड़ी थीं, इसलिए विचारों की नींद भी जाने कब टूटती थी—कोई पता ही नहीं था। दूसरे कई बड़े अफसर जो सिर्फ अपनी टाइम की पाबंदी के कारण तरक्की पाते रहे हैं वे भी अब भ्राए फिरते हैं। होंठ काटते हैं, मुट्ठियां बंद करते हैं, दांत पीसते हैं लेकिन घड़ियां बंद-की-बंद खड़ी हैं। साहब की टाइम की पाबंदी का रैब-दाब उतर चुका है। उनको भी होश-हवास नहीं कि दफ्तर के 'अपाइंटमेंट' क्या हैं—कहां हैं?

जब से समय यूं नदारद हुआ है—सरकार उदार हो गई है। अफसर उदार हो गए हैं। मबको एक-दूसरे की तकलीफ का थोड़ा ख्याल आया है। इसीलिए सभी मालिकों, अफसरों और सरकार की उदार सलाह से बाकी सारी हड़तालें समाप्त हो गई हैं।

घड़ियों की हड़ताल मगर अटूट है। सारी घड़ियां ठहरी खड़ी हैं। सरकार को समझ नहीं आ रहा है कि समय की एकता का राज क्या है?

सभी परेशान थे। मगर समय की खोजबीन में इस बार सभी जुट गए थे। पंडित लोग, प्रोफेसर लोग, वैज्ञानिक लोग, दिनमानी-दूकानों के ज्योतिषी लोग और सौदा-सूत करने वाले सभी व्यापारी लोग भी। इस प्रकार सरकार अब अकेली नहीं रह गई थी। जनता का साथ मिला तो कई अच्छे सुझाव भी सामने आए। एक सुझाव 'घड़ीसाज़ों की कमेटी' का था।

सुझाव था कि, "सारे देश के घड़ीसाज़ों की एक राष्ट्रीय कमेटी बनाई जाए। इसी कमेटी को घड़ियों की

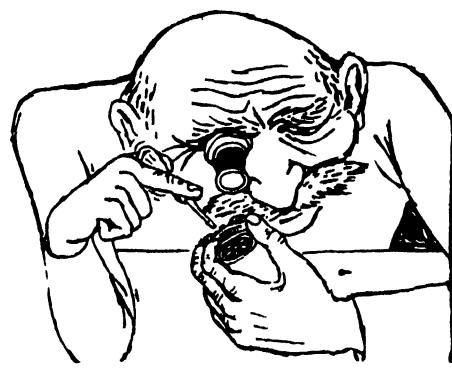
हड़ताल का कारण तलाशने का काम सौंपा जाए।" सुझाव सभी मंत्रियों व अफसरों को अच्छा लगा था। सबने अपनी सहमति दे दी थी। सारे देश के नामी घड़ीसाज़ों के नाम आदेश जारी कर दिए गए थे, "तुरंत राजधानी पहुंचो।"

सरकारी हुक्म पाते ही सभी नामी घड़ीसाज़ दिल्ली दौड़ आए।

समिति की सारी बैठकों के प्रबंध हो चुके थे घड़ीसाज़ों से कहा गया था कि, "वे घड़ियों की हड़ताल का कारण तलाशें। अपने-अपने घरों में सुधरने आई मरीज़ घड़ियों के बीच कभी किसी ने कोई कानाफूसी सुनी हो बताए।" सभी घड़ीसाज़ों से यह कहा गया कि, "वे किसी भी तरह पीछे छूट गए समय को लौटा लाने में सरकार की भरपूर मदद करें।" सबसे अपने अलग-अलग बयान मांगे गए थे।

खैरागढ़ के घड़ीसाज़ कीबारी आई—उसे बुलाया गया।

खैरागढ़ का घड़ीसाज़ नवाब साहब का खास घड़ीसाज़ है। नवाब साहब से ही उसे इतना पैसा मिल जाता है कि उसका और उसके छोटे परिवार का खर्च



चल जाए। इसीलिए वह सारे शहर की घड़ियां मुफ्त में ठीक करता है। कभी किसी से कोई मेहनताना नहीं लेता। हर आदमी के हाथ पर बंधी घड़ी उसे अपना हमदम मानती है। हर आदमी को उस पर पूरा भरोसा है।

कारण बहुत साफ़ है। खैरागढ़ का यह घड़ीसाज़ पिछले पचास वर्षों से इस शहर की घड़ियां सुधारता है। जब भी कोई आदमी नई घड़ी खरीदता है, इसकी गय कभी गलत नहीं जाती और यही कारण है कि इस क्षेत्र में कोई भी आदमी घड़ियों के मामले में आज तक कभी ठगा नहीं गया। हर हाथ पर बंधी घड़ी, हर घर में या दफ्तर में टंगी घड़ी हमेशा सही समय बताती है।

बात सिर्फ़ इतनी ही नहीं है। इस घड़ीसाज़ का पूरा परिवार इस काम को अपना पवित्र कर्तव्य समझकर करता रहा है। घर में पली तथा दो बेटे हैं। सभी मेहनती और काम के जानकार। सबने अपना काम बांट लिया है। सभी परोपकार और पूजा की भावना से काम करते हैं। उसकी बूढ़ी पली खैरागढ़ की सभी मस्जिदों तथा धर्मशालाओं की घड़ियां सुधारती-संवारती हैं। बूढ़े



घड़ीसाज़ की बूढ़ी पली मंदिर-मस्जिद में कोई भेद नहीं समझती। सभी धार्मिक स्थानों को वह समान रूप से पवित्र समझती है। वह समय को धर्म-निरपेक्ष मानती है। अपनी बात का सीधा और सरल प्रमाण उसके पास यह है कि मंदिर-मस्जिद में टंगी दो अलग-अलग घड़ियां एक ही समय बताती हैं—कभी कोई फर्क नहीं दिखाती।

खैरागढ़ के घड़ीसाज़ के दो बेटे भी यही काम उसके पास बचपन से ही सीखते रहे हैं।

लेकिन घड़ियां जब से रुकी हैं, तब से ही जैसे इस पूरे परिवार पर आफत टूट पड़ी है। राया परिवार एक-एक घड़ी का एक-एक पुर्जा परखने-देखने में लगा

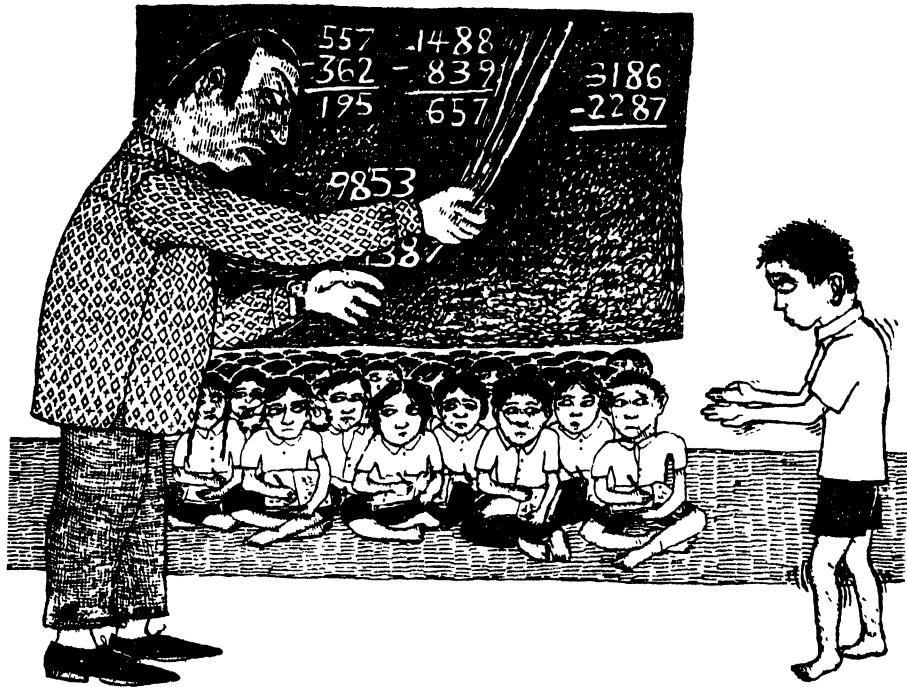
रहा—मगर घड़ियों के बंद होने का कारण समझ में नहीं आया। घड़ीसाजों का यह पूरा परिवार भी नहीं जान सका कि सारी घड़ियां एक साथ क्यूँ रुकीं? सब की समझ जैसे मात खा गई है। लेकिन अब भी पूरा परिवार कारण की तलाश में जुटा हुआ है।

एक दिन उस घड़ीसाज़ के दोनों बेटे स्कूल से दौड़े आए तथा घड़ियों के बंद होने का कारण ढूँढ़ लाए। घड़ीसाज़ को ऐसी खुशी हुई, जैसे अंधे को आंखें मिली हों।

घड़ीसाज़ बता रहा था : “कारण तो मैं खुद ढूँढ़ रहा था सरकार। मैं भी उतना ही हैरान था, लेकिन अब जो कारण मेरे दो लड़कों ने खोज निकाला है, पर वह सरकार की समझ से बाहर की चीज़ है। न पूछें तो ही अच्छा है।”

सरकारी अफसर ने तुरंत रौब से कहा, “तुम बताओ, तुम्हे सभी कुछ माफ़ है।”

खैरागढ़ के अनुभवी घड़ीसाज़ को सरकारी अफसर का यह ‘तुम-हम’ अच्छा नहीं लगा लेकिन वह करता भी क्या? वह बता रहा था : “साहब, घड़ियां तो आदमी ने बनाई हैं। अपनी सुविधा के लिए बनाई हैं। आज आटोमेटिक घड़ियां भी चल पड़ी हैं और इलेक्ट्रिक घड़ियां भी। लेकिन कोई ज़माना था जब या तो धूप-घड़ियां थीं या धूल-घड़ियां ही। जो भी हो, आदमी को समय के अंदाज़ की ज़रूरत थी। सिर्फ़ अंदाज़ की ही नहीं, सरकार उसे समय की कीमत पहचानने की ज़रूरत थी। उसको समय के सही उपयोग की ज़रूरत थी और उसने अपनी सुविधा के लिए घड़ियां बना लीं। घड़ियों का काम उसकी सुविधा के लिए उसे सहयोग देना था, लेकिन... लेकिन बात कुछ बिगड़ती जा रही है सरकार। मेरे लड़के बता रहे थे कि खैरागढ़ के सारे स्कूलों की घड़ियां पीछे रहा करती हैं। वे स्कूलों की घड़ियों पर हमेशा अपनी नज़र रखते रहे हैं। उन्होंने देखा है वे घड़ियां तभी पीछे रहती हैं जब किसी बच्चे को ढंडे पड़ते हैं। वे बताते हैं कि सभी स्कूलों में ज़रा भी देर से आने वाले लड़कों की लाइन अलग लगा करती है। यह लेटलतीफ़ों की लाइन कहलाती है। जब तक प्रार्थना होती है, तब तक मास्टरों की आंखें इन लेटलतीफ़ों की खबर लेने को तकती रहती हैं। बच्चों को नफरत से देखती ये आंखें सिर्फ़ उस अवसर का इंतज़ार करती हैं जो बच्चों को सज़ा देने के लिए होता है। प्रार्थना के बाद इन ‘लेटलतीफ़ों’ को



जितने मिनट की देर हो उतने ही डंडे खाने पड़ते हैं। जब इनको डंडे पड़ रहे होते हैं तब तक स्कूल की सभी घड़ियां रुकी रहती हैं। इसके अलावा भी जब-जब इन मासूम बच्चों को पीटा जाता है तब-तब घड़ियां ठिठककर रुक जाती हैं। आपको यह जानकर हैरत होगी कि यह सिलसिला एक अरें से चलता रहा है मगर अब लगता है कि यह सब घड़ियों की बरदाशत करने की ताकत से बाहर की बात हो गई है। इसीलिए वे ठहर गई हैं। सज्जा और समय का मेल घड़ियों को मंजूर नहीं लगता। फिर सज्जा भी मासूम बच्चों को। घड़ियां इसे नहीं सह सकी हैं।"

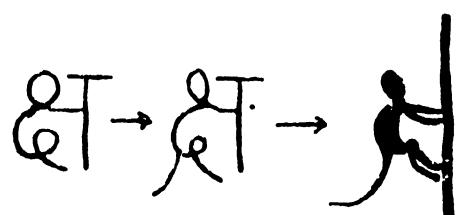
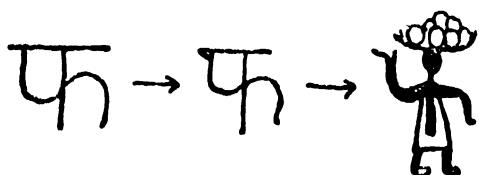
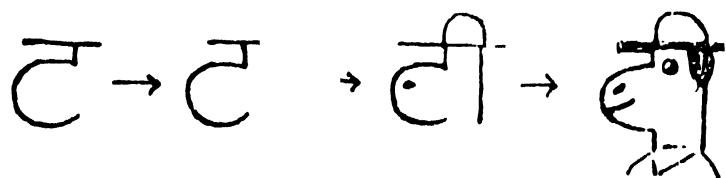
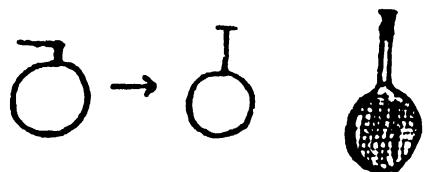
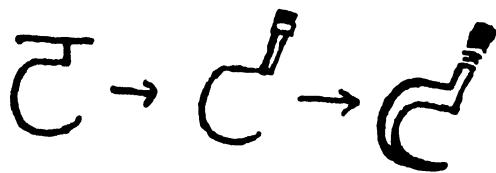
खैरागढ़ का घड़ीसाज़ एक लंबी सांस लेकर रुक गया था। उसने पानी पीना चाहा था—उसे पान की भी तलब हो आई थी। सरकारी दफ्तर का चपरासी दौड़कर पानी लाया था। दूसरा चपरासी पान लेने दौड़ा था। पानी पीकर खैरागढ़ के घड़ीसाज़ ने अपनी बात आगे बढ़ाई। वह कह रहा था :

"घड़ियां बच्चों पर सवार हो जाएंगी—ऐसा किसने सोचा था सरकार? बच्चे भी अगर फौजी आदमी की तरह समय पाबंद हो जाएंगे तो बच्चे क्यूँ कहलाएंगे? बच्चे केवल बच्चे ही बने रहें इसके लिए तो उनको समय के इस आतंक से बचाना ही होगा सरकार। ऐसा भी किसने सोचा था कि समय बच्चों पर यूँ सवार हो

जाएगा और सारी दुनिया की कच्ची पौध समय से इस तरह डरती रहेगी? यह बात तो सरकार आपके ध्यान में आनी चाहिए थी, लेकिन जब ऐसा होता ही ना दिखा तो घड़ियों ने खुद ही फैसला किया। घड़ियों ने अब सारे बच्चों की हँसी-खुशी के लिए न चलने का फैसला किया है। वे तब तब तक नहीं चलेंगी जब तक कि फौजी कानून स्कूलों से नहीं हटा लिए जाएंगे, बच्चों पर समय को इस क़दर क़ूरता से सवार नहीं होने दिया जाएगा। अब आप ही बताइए सरकार, ऐसी बात कैसे समझ में आएगी आप सबको? कैसे बदलेंगे आप अपना रुख?"

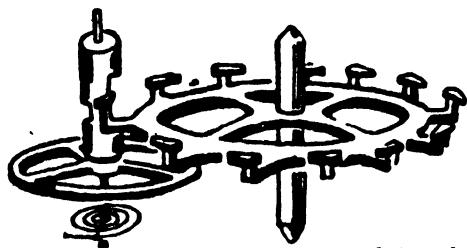
खैरागढ़ के घड़ीसाज़ का सवाल एक लंबी सिफारिश के साथ एक बड़ी कमेटी में पूछे जाने के लिए भेज दिया गया था। उसका सारा बयान एक अफ़सर ने दर्ज किया था। खैरागढ़ की घड़ियों का फैसला सुनकर सभी सरकारी अफ़सर चकित थे। उन्होंने तुरंत शिक्षा मंत्रालय के नाम एक चिट्ठी भेजी कि घड़ियों के फैसले पर विचार करने के लिए देश के नामी शिक्षाविदों को बुलाया जाए, एक कमेटी फिर बिठाई जाए और बच्चों पर समय की पाबंदी लागू करने की बात पर फिर विचार किया जाए।

□ रमेश थानवी
सभी चित्र : कैरन हेडाक
(लेखक के सौजन्य से उनके बाल उपन्यास 'घड़ियों की हड्डताल' का एक हिस्सा) ।



पिछले अंकों में तुमने अपनी बारहखड़ी के कुछ अक्षरों में विभिन्न आकृतियाँ ढूँढ़ने की कोशिश की होगी। तुमने सोचा होगा, अरे इतनी मज़दार बात हमें पता ही नहीं थी। खैर... इसी क्रम को आगे बढ़ाते हैं।

कल्पना : विष्णु चिंचालकर
वित्र : अविनाश देशपांडे



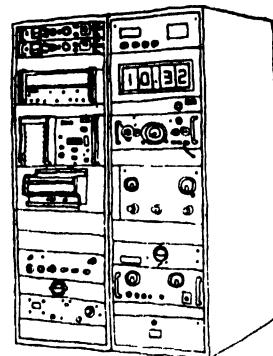
फ्लाईव्हील दोलक

इसे और अच्छी तरह समझने के लिए तुम किसी चाबी वाले खिलौने को देखो। उसमें यही क्रिया होती है।

पर इस घड़ी में भी सिंग की ऐंठन के खुलने को नियंत्रित करना ज़रूरी था, तभी वह घड़ी की तरह काम कर पाती। पीटर ने इस काम के लिए छोटे-छोटे भारों का उपयोग किया था। यानी अभी भारों से पूरी तरह छुटकारा नहीं मिला था।

पीटर हैनलीन से आज तक घड़ी के भीतरी और बाहरी रूपों में बहुत परिवर्तन हुआ है। बड़ी घड़ियों में तो दोलक लगाकर भार से चलने वाले पहियों की गति को नियंत्रित किया जा सकता था। लेकिन छोटी घड़ियों में दोलक लगाना संभव नहीं था। हाइंजिस नामक एक घड़ीसज्ज ने छोटी घड़ियों के लिए भी एक दोलक ढूँढ निकाला। यह दोलक एक फ्लाईव्हील है और इसमें एक बाल जैसा सिंग होता है। यह इस्पात का बना सर्पाकार होता है। इसका एक सिरा फ्लाईव्हील के एक्सल से और दूसरा घड़ी से जुड़ा होता है यानी स्थिर। अगर फ्लाईव्हील को दाएं या बाएं धुमाकर छोड़ दिया जाए तो वह बहुत कुछ एक दोलक की तरह दोलन करने लगता है।

जब हम फ्लाईव्हील को धुमाते हैं तो सिंग में ऐंठन भरने लगती है, जैसे ही फ्लाईव्हील को छोड़ते हैं तो सिंग अपनी पुरानी स्थिति में आने की चेष्टा करती है। लेकिन फ्लाईव्हील के कारण वह एकदम खुल नहीं पाती है। जब सिंग खुल नहीं पाती तो वह दूसरी दिशा में ऐंठने लगती है। बस यही क्रिया चलती रहती है। सिंग की ऐंठन खुलते समय शक्ति फ्लाईव्हील में और फ्लाईव्हील धूमते समय सिंग में एकत्रित होती रहती है। वास्तव में तो एक बार चाबी भर देने के बाद घड़ी चलती रहनी चाहिए, लेकिन धर्षण और हवा से होने वाली रुकावट के कारण ऐसा संभव नहीं हो पाता। इसीलिए इन घड़ियों में प्रतिदिन चाबी भरनी होती है। फ्लाईव्हील दोलक की ही भाँति घिरियों को धीरे-धीरे और समान रूप से चलाता है। हमारी चाबी से चलने वाली कलाई घड़ियां इसी तरह काम करती हैं।



केसियम परमाणु घड़ी

बीसवीं शताब्दी के आरंभ तक जेबघड़ियों का प्रचलन था, लेकिन फिर धीरे-धीरे हाथघड़ियों की मांग बढ़ने लगी। और अब तो तरह-तरह की हाथघड़ियां बाज़ार में उपलब्ध हैं। ऐसी घड़ियां भी हैं जिनमें केवल समय ही नहीं, तारीख, दिन, महीने का नाम तथा चंद्रमा की कलाएं भी देखी जा सकती हैं।

और अब तो इलेक्ट्रॉनिक घड़ियों का जमाना है। इलेक्ट्रॉनिक घड़ियां भी तरह-तरह की हैं। सबकी कार्यप्रणाली तो एक ही है, लेकिन उनमें प्रयुक्त होने वाली सामग्री अलग-अलग है। जैसे आजकल प्रयोगशालाओं और आकाश के तारों का अवलोकन करने के लिए अत्यंत सही समय बताने के लिए क्वार्ट्ज् क्रिस्टल घड़ी और परमाणु घड़ी उपयोग में लाई जाती है।

क्वार्ट्ज् एक सामान्य खनिज है। रेत क्वार्ट्ज् के लघुकणों से बनती है। शुद्ध क्वार्ट्ज् में वैद्युतिक गुण होते हैं। जब क्वार्ट्ज् क्रिस्टल में से विद्युतधारा गुजारी जाती है तो क्रिस्टल बिलकुल नियमित रूप से कंपन करता है। कंपन की गति क्रिस्टल की मोटाई पर निर्भर करती है। क्रिस्टल जितना पतला होगा उसमें उतना ही ज्यादा कंपन होगा। क्वार्ट्ज् घड़ियों में क्रिस्टल इतना पतला कर दिया जाता है कि वह एक सेकेंड में 10,00,000 बार कंपन करता है। इसलिए सेकेंड का कई हजारवां भाग भी मापा जा सकता है।

सबसे आधुनिकतम घड़ी परमाणु घड़ी है। यह घड़ी सेकेंड के दस लाखवें हिस्से को भी माप सकती है।

परमाणु घड़ी और गैलीलियो के दोलक वाली घड़ियों के बीच चार शताब्दियां बीत चुकी हैं। और शायद आने वाला समय परमाणु घड़ी को भी कहीं पीछे छोड़ दे।

वेधशाला में धूपघड़ी

जंतर-मंतर का नाम तुमने सुना होगा। जंतर-मंतर का संबंध वास्तव में हमारे देश में प्रचलित खगोल विज्ञान के अध्ययन के तरीकों से है। अठारहवीं शताब्दी में जयपुर के राजा सर्वाई जयसिंह द्वितीय ने खगोलीय अध्ययन के लिए वेधशालाओं का निर्माण करवाया था। ये वेधशालाएं जयपुर, दिल्ली, मथुरा, वाराणसी और उज्जैन में स्थित हैं। इनमें से दिल्ली की वेधशाला जंतर-मंतर के नाम से जानी जाती है। जयपुर की वेधशाला सबसे अधिक प्रसिद्ध है।

पिछले आवरण पर दिया चित्र देखो। यह उज्जैन की वेधशाला का है। इसमें तुम्हें एक सीढ़ीनुमा दीवार दिखाई पड़ रही होगी। यह सम्राट यंत्र है। इसके दो हिस्से हैं—एक तो सीढ़ियां, दूसरा इसके दोनों बाजू में बनी दीवारें। प्रत्येक दीवार एक चौथाई गोले के बराबर है। इन गोले दीवारों पर घंटे, मिनट तथा सेकेंड के निशान खुदे हुए हैं। वास्तव में सम्राट यंत्र एक घड़ी है। चौथाई गोले उसके डायल हैं। प्रत्येक चौथाई गोला आधे दिन का समय बताता है। जब आकाश में सूर्य चमकता है तो सीढ़ीनुमा दीवार की छाया किसी एक गोले पर पड़ती है। छाया गोले के जिस निशान पर पड़ती है उसे देखकर समय पता किया जाता है।

सम्राट यंत्र की सीढ़ीनुमा दीवार पृथ्वी की ध्रुवी के समानांतर है। इसका उत्तरी भाग उत्तरी ध्रुव के सामने है।

चित्र में सामने की ओर तुम्हें घड़ी के डायल की भाँति एक गोला दिखाई दे रहा होगा। यह नाड़ी बलय यंत्र है। ऐसा ही एक गोला पीछे की तरफ यानी सम्राट यंत्र के सामने बना है। दोनों गोलों पर आधे-आधे हिस्सों में घंटे व मिनट के निशान खुदे हैं। बीच में एक कील भी लगी है। सूर्य जब चमक रहा होता है तो कील की छाया गोले पर बने निशानों पर पड़ती है। दो गोले यूं ही नहीं बनाए गए हैं। वास्तव में जब सूर्य उत्तरायण होता है तो यंत्र की उत्तरी दिशा में बने गोले पर छाया पड़ती है। जब दक्षिणायण होता है तो दक्षिण दिशा में बने गोले पर पड़ती है।

इनके अलावा वेधशाला में और भी यंत्र हैं। अगर तुम कभी उज्जैन जाओ तो स्वयं वहां जाकर उनके बारे में पता करना।

कैलेंडर

पिछली बार हमने कैलेंडर की संख्याओं में बनने वाले आयतों में जादू की खोज की थी। इस बार ज़रा वर्गों में दिमाग लगाते हैं।

1	2	3	4	5	6	7
8	9	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30	31				

सबसे पहले 2×2 यानी 2 संख्याओं वाला वर्ग लें :

1	2	3	4
8	9	10	11

इसमें मजेदार बात क्या है? जरा देखें :

$$1 + 9 = 10 \quad 3 + 11 = 14 \\ 2 + 8 = 10 \quad 4 + 10 = 14$$

यानी यदि हम वर्ग के कर्ण पर पड़ने वाली संख्याओं को जोड़ें तो योग एक ही आता है।

क्या यह मजेदार बात तीन संख्याओं वाले वर्ग में भी है? दो उदाहरण लेकर जांच करते हैं :

1	2	3	12	13	14
8	9	10	19	20	21
15	16	17	26	27	28

$$1 + 9 + 17 = 27 \quad 12 + 20 + 28 = 60 \\ 3 + 9 + 15 = 27 \quad 14 + 20 + 26 = 60$$

यह तो बहुत मजेदार है। है ना? तुम और ऐसे वर्ग चुनकर देख सकते हो कि क्या नियम सही है।

अब ज़रा इन्हीं वर्गों की बीच वाली (आड़ी व खड़ी) पंक्ति की संख्याओं का भी जोड़ देखें :

$$2 + 9 + 16 = 27 \quad 13 + 20 + 27 = 60 \\ 8 + 9 + 10 = 27 \quad 19 + 20 + 21 = 60$$

पर क्या ऊपरी तथा निचली, पहली और तीसरी पंक्तियों का योग भी वही आता है? करके देखो!

इन वर्गों में एक और मजेदार बात छुपी हुई है। वर्ग के बीचोंबीच की संख्या में 3 का गुणा करने पर हमें योग के बराबर ही संख्या मिलती है :

$$9 \times 3 = 27 \quad 20 \times 3 = 60$$

अब तुम क्या 4 संख्या वाले वर्ग में छुपा जादू पहचान सकते हो? जरा करके देखो।

□ ची.के. श्रीनिवासन

अब तक तुमने पढ़ा

प्रोफेसर अपने एक सहायक और पथ प्रदर्शक के साथ भूगर्भ की यात्रा पर हैं। वे यात्रा करते हुए एक समुद्र के किनारे लग गए। वहाँ उन्हें एक सुरंग मिली, जिसमें अंदर जाने पर उन्हें आगे का रास्ता बंद मिला। उन्होंने उसे बारूद लगाकर तोड़ डाला। सुरंग का रास्ता खुलते ही पानी का एक बड़ा रेला आया और सबको बहाकर ले गया। वे लोग एक बड़े पर सवार थे। अब आगे पढ़ो....

मुझे होश आया तो मैंने आंखें खोलीं। मैंने देखा कि हैंस अपने मज़बूत हाथों से मुझे और चाचा जी को थामे हुए था। मुझे कोई खास चोट तो नहीं आई थी। हाँ, थकावट से चूर अवश्य हो गया था। मैं एक ऐसी चोटी पर लेटा था जिससे सिर्फ दो क़दम हटकर ही हज़ारों फुट गहरी खाई थी। हम ज़रा से हिलने-डुलने

से ही उसमें गिर सकते थे। हैंस ने हमें एक बार फिर बचाया और हमें एक सुरक्षित स्थान पर पहुंचा दिया। यहाँ हमें वास्तविक आकाश के दर्शन हुए। 62 दिनों में पहली बार हम आकाश देख रहे थे।

“हम कहाँ हैं?” चाचा जी ने पूछा। हैंस ने सिर हिलाकर बताया कि वह नहीं जानता।

“क्या आइसलैंड द्वीप में,” मैंने पूछा।

“नहीं।”

“क्या कहा? नहीं?” प्रोफेसर चीखे।

“हैंस गलती कर रहा है।” मैंने कहा, “हमें यात्रा के बीच बड़े-बड़े आक्षर्यों का सामना करना पड़ा था और यह उनमें किसी से कम न था। हमें बर्फ से ढके ज्वालामुखी देखने की आशा थी। लेकिन यहाँ तो सूर्य की गरमी से झुलसी हुई सूखी पहाड़ियों के अतिरिक्त कुछ भी न था।



अंत में प्रोफेसर ही ने शांति भंग करते हुए कहा “जो भी हो, यह आइसलैंड द्वीप की तरह तो है नहीं।”

हमसे कुछ ही दूरी पर हरियाली थी और हमसे करीब 500 फुट की दूरी पर वह मुहाना था जिससे हम बाहर फेंक दिए गए थे। लेकिन इतना तो निश्चित ही था कि आइसलैंड द्वीप की तरह वहां कुछ भी न था। हमारे सामने थे हरे-हरे वृक्ष और उनके पीछे लहरा रहा था नीला सागर। यह स्थान एक छोटे से द्वीप की तरह मालूम दिया। पूरब की ओर थोड़े से मकान भी थे।

“हम कहां पर हैं? हम कहां पर हैं?” मैं बराबर सोचे जा रहा था। हैंस ने अपनी आंखें बंद कर लीं। लगता था उसे इस विषय में कोई दिलचस्पी न थी।

चाचा जी बोले, “ये चाहे जो भी पर्वत हो, लेकिन हम हैं किसी गरम स्थान पर ही—सिर्फ गरम ही नहीं बल्कि ख़तरनाक स्थान पर हैं हम सब। हम एक सक्रिय ज्वालामुखी के बीच से तो सुरक्षित निकल आए हैं लेकिन अगर कहीं चट्टान ही लुढ़क गई तो हमारी हड्डियों-पसलियों का पता न चलेगा। हमें तुरंत नीचे उतर चलना चाहिए। साथ ही मैं तो भूख और प्यास से मरा जा रहा हूं।”

रास्ता अच्छा नहीं था इसलिए इस उस पर चलने में बड़ी कठिनाई हो रही थी। हम बराबर बातें किए जा रहे थे।

“हमें एशिया में होना चाहिए,” मैं चीखा, “भारत के तट पर और या फिर मलाया द्वीप में। हमने आधी दुनिया की यात्रा कर डाली।”

“लेकिन कंपास क्या बतला रहा है।”

“कंपास के अनुसार हम बराबर उत्तर की तरफ बढ़ते आए हैं।

“तब फिर कंपास हमें सच्ची बात नहीं बता रहा।”

“चाचा जी! यह कैसे हो सकता है?” इस प्रश्न का मुझे कोई भी उत्तर न मिला।

और अब हम किसी सुंदर देश के निकट थे। मुझे ज़ोर से भूख भी लग रही थी और प्यास भी। कुछ दूर चलने के बाद एक पेड़ से तोड़ हमने फल खाए और हमें पीने के लिए पानी भी मिला। तभी पेड़ पर चढ़ा हुआ एक बच्चा दिखाई दिया। बेचारा फटे-पुराने कपड़े पहने बड़े ही दीन भाव से हमें देख रहा था। हमसे कुछ डर-सा रहा था बेचारा। जैसे ही वह भागने

लगा, हैंस ने उसे पकड़ लिया। बच्चा लगातार चीखे जा रहा था। चाचा जी ने उसे पुचकारा और प्यार करते हुए जर्मन भाषा में पूछा, “क्यों मेरे नन्हे दोस्त, इस देश का क्या नाम है?”

बच्चा चुप रहा।

“बहुत अच्छा,” चाचा जी बोले, “हम जर्मनी में नहीं हैं,” और फिर उससे अंग्रेजी में पूछा। बच्चा अब भी चुप रहा।

“हम इंग्लैंड में भी नहीं हैं। अच्छा, अब इंटैलियन भाषा में पूछूं।” चाचा जी बोले और अबकी बार इंटैलियन में पूछने पर भी कोई उत्तर न पाकर वे झुंझला पड़े और बच्चे के कान उमेटते हुए इंटैलियन भाषा में ही गरजे, “नहीं बोलोगे तुम। क्यों बे! इस द्वीप को किस नाम से पुकारता है? तू बोलता है कि नहीं।”

“स्टॉम्बोोली” कहकर वह बच्चा पेड़ों के झुरमुट में भागकर कहीं गायब हो गया। अब हमें उसकी ज़रूरत भी नहीं थी। स्टॉम्बोोली! इस नाम को सुनने की तो ज़रा सी भी आशा न थी। यानी हम भूमध्य रेखा के बीचों-बीच में थे और वे पहाड़ थे कैलेब्रिया के। हमारी यात्रा भी कम आश्वर्यजनक नहीं रही। हम एक ज्वालामुखी के अंदर गए और दूसरे से बाहर आए। एक उजाड़ भाग को पीछे छोड़ हम इस सुंदर प्रदेश में आ पहुंचे। फलों का नाश्ता करने के बाद हम पानी पीकर धूमने के लिए निकले। हमने वहां के निवासियों से अपनी यात्रा के विषय में कुछ भी न बताना ही उचित समझा, क्योंकि इसका सिर-पैर भी उनमें से किसी की समझ में न आता। उन लोगों से बताया कि हम लोग नाविक हैं और दुर्घटनावश यहां आ पहुंचे हैं। धूमते-धूमते हम सैनविकेंजो के बंदरगाह तक चले गये। यहां आकर हैंस ने अपनी सेवा के 13वें सप्ताह का पारिश्रमिक मांगा। चाचा जी ने बड़ी प्रसन्नता से चुका दिया। उस समय हमारा पथ-प्रदर्शक मुस्कुराया—इससे पहले हमने उसे कभी भी ऐसा करते नहीं देखा था। यहां लोग बड़े दयालु और भले थे। उन्हें हमें खाना खिलाया और कपड़े भी पहनने को दिए। लगभग 48 घंटे रुक कर हम मेसिना के लिए चल पड़े। उस दिन तारीख थी 31 अगस्त।

शुक्रवार 4 सितम्बर को हम मेसिना से भी चल पड़े। तीन दिन बाद हम मारसेलीस पहुंचे।

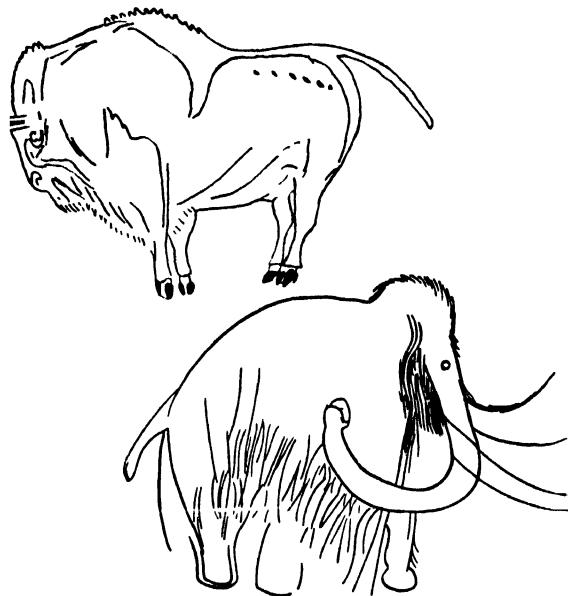
9 सितम्बर की शाम को हम हैम्बरी पहुंचे। मैं

चित्रकला के इतिहास से...

आज से लगभग सौ वर्ष पहले की बात है। उन दिनों सबसे पुराने समय के मानवों के बारे में खोज हो रही थी। दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में, गुफाओं में खुदाई करने से इस बात के सबूत मिले थे कि सबसे पुराने मानव गुफाओं में ही रहते थे। वे पथर के औजार बनाते थे और जानवरों का शिकार करके खाते थे। यह हजारों साल पहले की बात है। उन्हें 'गुफा मानव' कहा जाने लगा। लोग सोचते थे कि गुफा मानव का सारा समय जानवरों की तरह बीता था—शिकार करना, उसे खाना और सो जाना। फिर वही क्रम! बस! लोग यह भी सोचते थे कि गुफा मानव में बहुत कम बुद्धि थी, इसलिए वह कुछ और सोच या कर ही नहीं पाता था।

ऐसे में स्पेन की एक बारह साल की लड़की ने जो खोज की, उससे लोगों का उक्त विचार बिलकुल गलत साबित हुआ। मारिया नाम की यह लड़की एक बड़े ज़मींदार की बेटी थी। मारिया के पिता को गुफा मानव के बारे में जानने की बड़ी जिज़ासा थी। उनके गांव के पास एक बहुत बड़ी गुफा थी। उस गुफा में उन्हें मानव की हड्डियां और पथर के औजार मिले थे। मारिया के पिता पिछले कई वर्षों से इनका अध्ययन कर रहे थे।

एक दिन मारिया ने ज़िद पकड़ ली कि वह भी गुफा देखने जाएगी। पिता ने लाख मना किया। तरह-तरह से डराया—नहीं वहां बहुत अंधेरा है, सांप-बिच्छु होंगे, गुफा में भटक जाओगी तो मिलना मुश्किल हो जाएगा। पर मारिया ने अपनी ज़िद नहीं छोड़ी। आखिरकार उसके



(ऊपर) फ्रांस की एक गुफा में बना सांड।

(नीचे) ऊनी मोमथ। हाथी जैसा यह जानवर आज से दस हजार साल पहले तक पृथ्वी पर पाया जाता था। इसके चित्र भी गुफाओं की दीवार पर मिले हैं।

पिता को उसे साथ ले ही जाना पड़ा।

गुफा में बहुत अंधेरा था। उजाले के लिए बस एक लालटेन भर साथ में थी। मारिया के पिता गुफा की ज़मीन पर से खुरच-खुरच कर हड्डियां बीन रहे थे। मारिया आसपास घूम रही थी। मारिया उबने लगी। मगर पिता से कैसे कहे, वे नाराज़ हो जाएंगे। मारिया थककर एक जगह लेट गई। कुछ देर बाद उसकी नज़र छत पर गई तो उसने रंग-बिरंगे जानवर देखे। उसने सोचा कहीं मैं सपना तो नहीं देख रही हूँ। उसने अपनी आंखें मसलीं। नहीं, वह तो जाग रही थी। मारिया चिल्ला उठी—पापा, पापा देखो कितने सरे चित्र!



फ्रांस की लास्काऊ गुफा की दीवार पर बैल, घोड़े, भैंस और हिरणों के चित्र। 13

फ्रांस की एक गुफा की दीवार पर दौड़ते घोड़े का चित्र।



भैसों के चित्र! पर उसके पिता तो हिंडियां खोदने में मग्न थे। उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया और कहा, हाँ, हाँ अंधेरे में ऐसा ही दिखता है। मगर मारिया उन्हें खींच लाइ और चित्रों से भरी गुफा की छत दिखाई। पिताजी दंग रह गए। इतने बड़े, इतने सुंदर, रंगीन चित्र। ऐसे लग रहा था मानो जीते-जागते जानवरों का कारवां (झुंड) कहीं जा रहा है।

वास्तव में यह मारिया की खोज थी। जिस गुफा मानव को सब मंद बुद्धि का मानते थे, उन्होंने ऐसे अद्भुत चित्र बनाए! और वह भी आज में कोई



मारिया ने गुफा में भैसों के इसी तरह के चित्र देखे थे।

पंद्रह-बीस हजार वर्ष पहले! यह कैसा चमत्कार है। शुरू में तो लोगों ने इस बात को मानने से इंकार कर दिया कि ये चित्र गुफा मानव के बनाए हैं। मगर धीरे-धीरे बहुत से और ऐसे चित्र मिले और सबको यह स्वीकार करना पड़ा। अब गुफा मानव के बारे में लोगों के विचार भी बदल गए हैं। गुफा मानव जंगली, बुद्धिहीन नहीं बल्कि सृजनात्मक कलाप्रेमी मनुष्य था। जिसने अपने आसपास की दुनिया को बारीकी से देखा। उसने जानवरों को चलते, रुकते, बैठते, दौड़ते और तीरों का शिकार होकर मरते देखा और फिर हूँ ब हूँ उनके चित्र बनाए।

हूँ ब हूँ जानवरों के चित्र बनाना, यूरोप के प्राचीन गुफा मानव की विशेषता थी। जैसा जानवर दिखा, उसने जो प्रभाव और छाप गुफा मानव पर छोड़ी गुफा मानव ने बिल्कुल वैसा ही चित्रित करने की कोशिश की। इस तरह के चित्रण को यथार्थवादी चित्रण (यथा यानी जैसा है वैसा) या छापवादी चित्रण कहते हैं।

बेशक इन चित्रों से यह तो साबित हो गया कि हजारों साल पहले का गुफा मानव बुद्धि और कलाकारी में हमसे कम नहीं था। लेकिन इसके साथ ही कई अन्य प्रश्न खड़े हो गए। जंगली जानवरों का शिकार करके पेट भरने वाले ये लोग (जिनका बाकी समय भी जानवरों का पीछा करने में बीतता था) आखिर गुफाओं की दीवार पर चित्र क्यों बनाते थे? क्या वे दीवारों को सजाते थे? या इन चित्रों का संबंध उनकी धार्मिक मान्यताओं से था? कहीं ये चित्र उनके विचारों को व्यक्त करने का तरीका तो नहीं थे? कहीं...

इन सब प्रश्नों पर अगले अंकों में विस्तार से बात करेंगे। तब तक तुम भी सोचो।

□ सी.एन. सुब्रह्मण्यम्

चक्रमूक

ओस

कितनी प्यारी-प्यारी ओस,
चल कर आई कितने कोस

मोती जैसी चमक रही है,
हीरे जैसी दमक रही है।
अगर छू लिया, होगी पानी,
करना मत ऐसी नादानी।

किरण-सहेली आएंगी,
हाथ पकड़ ले जाएंगी।
खेलेगीं ये हाथा-ताली,
ओस कहीं छिप जाएंगी,

किरणों पकड़ न पाएंगी,
बस, इतना ही है अफसोस।

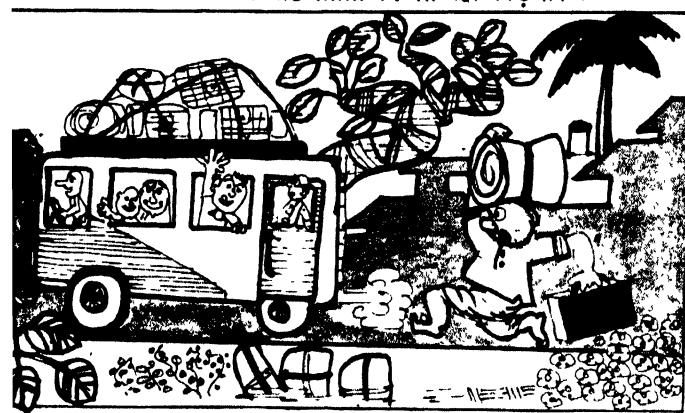
□ भगवती लाल व्यास

मनमौजी की मनमौजी घड़ी

विवरकथा : शिवेंद्र पाठिया
पात्र : राजेश उत्तमी



तस आगे और मनमौजी उसके पीछे पर बस नहीं पकड़ सके।



मनमौजी ने सोचा, चलो अब दाढ़ी ही बना लें

तभी एकाएक अलार्म घनघना उठा और

ही तो घड़ी थी ...!
ग फैक पढ़ता।

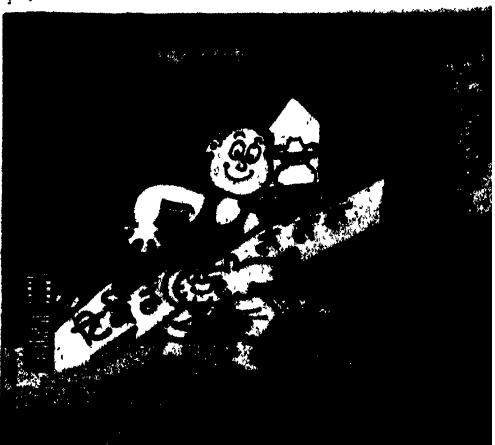


अगले ही पल न जाने क्या सोचा, घड़ी उठाई और घर बापस।

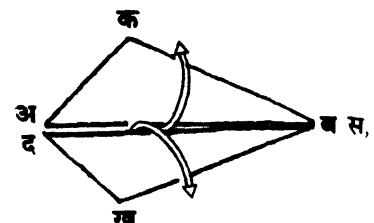
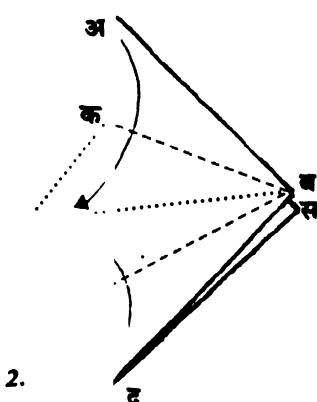
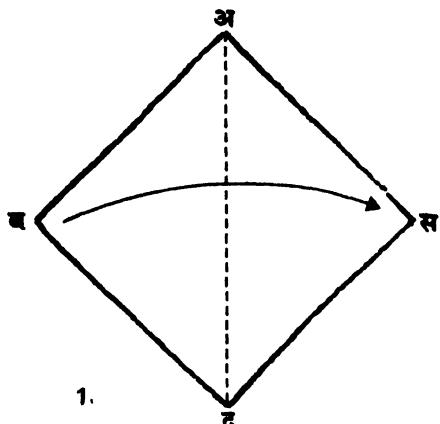


तस एक चोर उनके घर में पुसा।





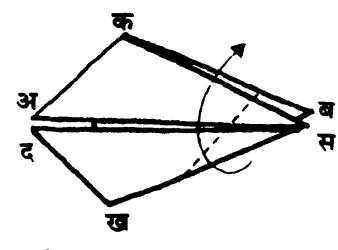
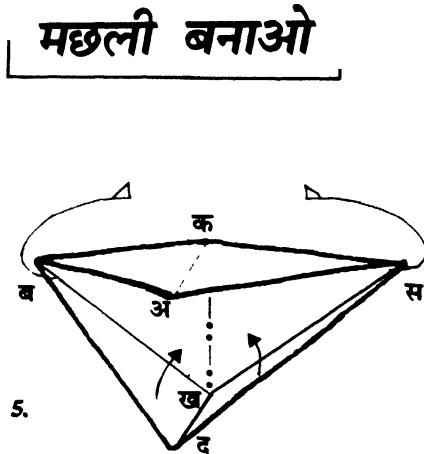
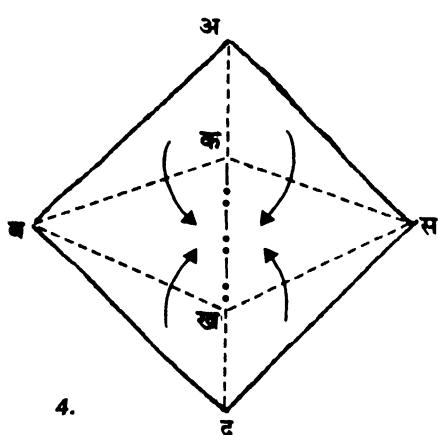
खेल कागज़ा की बैलों की बनावट



जितनी बड़ी मछली बनाना चाहते हो, उस अनुपात से कागज़ा का वर्गाकार टुकड़ा लो। सुविधा के लिए चारों कोनों को नापांकित कर लो। अब ख स कोनों को मिलाते हुए कागज़ा को बीच से मोड़ो।

अ और द कोनों को चित्रानुसार मोड़ो।

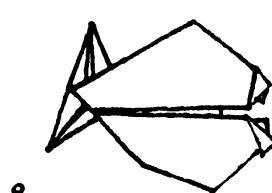
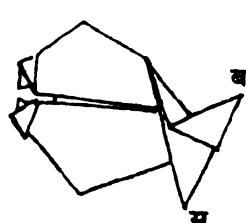
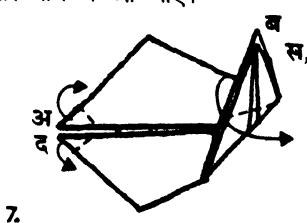
यह ध्यान रखो कि इस तरह मोड़ने पर जो त्रिभुज बनें, उनमें द ख स, अ क ख से छोटा हो। सभी मोड़ों को अंगूठे से रगड़कर पक्का कर दो।



अब कागज़ा को फैलाओ और ख क स तथा ख ख स रेखाओं पर से कागज़ा को अंदर की तरफ ऐसे मोड़ो कि अ और द सिरे बीच में आ जाएं।

इस तरह जो आकृति बने उसमें ख और स कोनों को पीछे की तरफ मोड़कर पास ले आओ।

ख स सिरों को चित्र में दिखाए तरीके से ऊपर की तरफ मोड़ो।



स सिरे को बीच से आधा मोड़ते हुए नीचे ले आओ। अ द सिरों को थोड़ा-थोड़ा अंदर की तरफ मोड़ दो।

मछली तैयार, चाहे ऐसे रखो।

चाहे ऐसे...।

हुदहुद बोलते समय लगातार तीन बार हुप-हुप-हुप की आवाज़ करता है, जिसके कारण अंग्रेजी में इसे हूपू कहते हैं। हुदहुद नाम भी इसी आवाज़ के कारण पड़ा है।

इसराइल देश के निवासी हुदहुद को एक पवित्र पक्षी मानते हैं। क्योंकि उनकी मान्यता है कि प्राचीन काल में उस देश के बादशाह सुलेमान ने इसे वरदान था। इसकी कहानी बहुत रोचक है। कहते हैं, बादशाह सुलेमान अपने जार्डिं उड़नखटोले पर बैठ कर कहीं जा रहे थे। जब उन्हें धूप से परेशानी होने लगी तब कई हुदहुदों ने उनके सर पर पंख फैलाकर उन्हें छाया दी। बादशाह ने प्रसन्न होकर हुदहुदों के सरदार को वरदान देना चाहा।

सरदार ने कहा, “आज से सब हुदहुदों के सर पर सोने का ताज हो।”

बादशाह ने सरदार को बहुतेरा समझाया कि वह ऐसा ख़तरनाक वरदान न मांगे, किंतु वह अपनी मांग पर अड़ा रहा। आखिर सुलेमान को उसकी बात माननी ही पड़ी। किंतु जल्दी ही सोने का यह ताज हुदहुदों के विनाश का कारण बनने लगा। मनुष्य ने सोने के लालच में इन पक्षियों का अंधाधुंध शिकार करना शुरू कर दिया और हुदहुदों का वंश समाप्त होने का खतरा पैदा हो गया। आखिर हुदहुदों का सरदार फिर से बादशाह सुलेमान के पास पहुंचा और उन्हें अपनी दर्द भरी कहानी सुनाई। बादशाह बोले, “इसीलिए मैंने तुम्हें सोने का ताज मांगने से मना किया था। खैर आज से सब हुदहुदों के सर पर सोने के स्थान पर सुंदर परों का ताज होगा।” तभी से हुदहुद के सिर पर सुंदर तुरा पाया जाता है। पर यह तो एक प्रचलित कहानी भर है वास्तव में ऐसा हुआ होगा, कहना मुश्किल है।

इस सुंदर पक्षी का शरीर बादामी रंग का होता है, और पंखों पीठ तथा पूँछ पर काली और सफेद धारियां होती हैं। इसकी सबसे बड़ी विशेषता इसके सिर पर पाया जाने वाला तुरा है जिसे यह पंखे की तरह खोल और बंद कर सकता है। इसकी काली चोंच लंबी और कुछ मुड़ी हुई होती है। मैना के आकार का यह पक्षी पूरे भारत में और भारत के बाहर एशिया और यूरोप में पाया जाता है। नर और मादा समान दिखते हैं। बहुत से लोग इसे ही कठफोड़वा समझ लेते हैं। कठफोड़वा के बारे में तुम पढ़ चुके हो, देखो क्या अंतर है!

हुदहुद का एक मात्र भोजन कीड़े और इल्लियां हैं, और इसीलिए यह भोजन की तलाश में ज़मीन पर अधिक समय बिताता है। अपनी लंबी और नुकीली चोंच की सहायता से यह छोटे-छोटे कीड़ों को भी आसानी से पकड़ सकता है। कीड़े चुनते समय यह अपना तुरा बंद रखता है और थोड़ी आहट होते ही उड़ कर किसी सुरक्षित स्थान पर पहुंच जाता है। फ्रसलों को हानि पहुंचाने वाले कीड़ों को नष्ट करने वाला यह पक्षी किसानों का एक अच्छा मित्र है।

हुदहुद का प्रजनन काल फ्रवरी से मई तक होता है। किसी पेड़ के खोखले तने में या किसी दीवार के छेद में तिनके चीथड़े और कूड़ा करकट बेतरतीब ढंग से रखकर ये पक्षी अपना घोंसला बनाते हैं। मादा 5 या 6 सफेद अंडे देती है। जहां अन्य पक्षी अपने घोंसलों को साफ़ सुथरा रखते हैं वहीं हुदहुद जैसे सुंदर पक्षी का घोंसला इतना गंदा और बदबूदार होता है कि उसके पास जाना भी मुश्किल होता है। सोचो ऐसा क्यों?

□ अरविंद गुप्ते
(चित्र सौजन्य : बांधे नेचुरल हिस्ट्री सेसायटी) 15

८०

होली को सब क्यूँ कहते हैं रंगों का त्यौहार
गिनती के छः सात रंग ही दिखते हैं हर बार।

काले, पीले, हरे, बैंगनी, नील, गुलाबी, लाल
इन्हें छोड़कर किसी रंग के बिकते नहीं गुलाल।

हमसे पूछो तो होली है बेरंगा त्यौहार
उस से ज्यादा रंगी होता सब्जी का बाजार।

अदरक, लस्सन, नींबू, बैंगन, शलजम और चुकंदर
प्याज, ट्याटर, गोभी, मेथी, हर दुकान के अंदर।

फूलों के रंगों की गिनती करने वैठो आज
हफ्ते भर तक गिनते पर भी खत्म न होगा काज।

कोई सलेटी, कोई बदामी, सिंदूरी, उल्लाबी
कोई द्रूषिया, कोई सुनहरा, खाकी या नारंगी।

ती

कोई बसंती, कोई नीबुई, कोई मोतिया होता
कोई फिरोजी, कोई भगवा, कोई गेरुआ होता ।

फूल हपहले और सफेद और अस्मानी होते हैं
ऊदे, भूरे, तरबूजी और सरसोई होते हैं ।

चिड़ियों, कीड़ों, जानवरों के रंग अगर गिनवायें
जीवन भर बस बैठें-बैठें उनको गिनते जायें ।

आंख खोलकर अगर कोई दुनिया को देखने पाये
होली का भरपूर मजा हर रोज उसे मिल जाये ।

सुबह सवेरे रंगी कपड़े पहनके बादल आयें
चिड़ियां रंगी पर फैलाये ऊपर-नीचे जायें ।

फूलों के संग करें तितलियां दिन भर हंसी ठिठोली
रोज शाम को सूरज खेले आसमान से होली ।

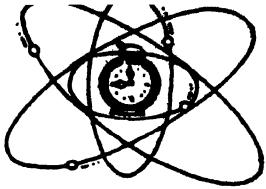
□ सफदर हाशमी

चित्र : आशा शर्मा/
(‘सहस्र’ के सौजन्य से)





समय की भाषा



परछाई से परमाणु तक

घड़ियों की हड्डताल की कहानी तुमने पढ़ ही ली होगी, (अगर न पढ़ी हो तो अब पढ़ लो)। तुमने देखा कि अगर घड़ी अपना काम बंद कर दें, तो कैसी आपाधापी मच जाती है। कम से कम उन लोगों का जीवन तो अस्त-व्यस्त हो ही जाता है जो घड़ी देखकर उठते-बैठते, खाते-पीते, काम करते और सोते हैं। वैसे घड़ी भी एक ज़माने तक तो संपत्र लोगों के हाथों में ही देखी जा सकती थी। या यूं कहें कि जिसकी कलाई पर घड़ी बंधी होती, उसका दस लोगों के बीच अपना ही रूटबा होता था। पर अब वह बात नहीं रही। अब तो इलेक्ट्रानिक घड़ियों का युग है। वो भी ऐसी कि फुटपथ पर बिकती हैं। कोई भी पच्चीस-तीस रुपए खर्च करे और अपनी कलाई पर घड़ी बांध ले।

पर घड़ी आई कहाँ से? क्या घड़ी हमेशा से मानव के जीवन में थी? जब घड़ी नहीं थी तब भी तो दुनिया चलती थी। तब भी लोग समय का अंदाज़ लगाते थे। तुमने कभी सोचा है दीवाल पर टंगी, टेबिल पर रखी या किसी की कलाई में बंधी टिक-टिक करती घड़ी कैसे बनी? किसने बनाए घंटे, मिनट, सेकेंड? लो हमने कहा और तुम सोचने लगे! कोई बात नहीं, चलो इस बार घड़ी के बहाने समय मापने के इतिहास की खोज पड़ताल करते हैं।

करोड़ों-वर्षों पहले जब न तो धरती पर इंसान था और न उसकी बनाई घड़ी। पर तब भी प्रकृति की बनाई एक घड़ी अपना काम लगातार कर रही थी। वह घड़ी आज भी है। जानते हो कौन है वह घड़ी? वास्तव में हमारी पृथ्वी ही वह घड़ी है। पृथ्वी एक बड़े लट्ठू की तरह अपनी धूरी पर एक समान गति से घूमती है और साथ-साथ सूर्य की परिक्रमा भी करती है।

यदि हम पृथ्वी की गति द्वारा चलने वाली एक बड़ी घड़ी बना सकते, तो इस घड़ी की दो सुईयां होतीं—एक वर्ष वाली और दूसरी रात-दिन वाली। वर्ष वाली सुई डायल पर एक चक्र तब पूरा करती, जब पृथ्वी सूर्य के चारों ओर अपना एक चक्र लगा लेती। इसी तरह पृथ्वी जब अपनी धूरी पर एक चक्र लगाती, तो रात-दिन वाली सुई का डायल पर एक चक्र पूरा हो जाता।

वास्तव में रात-दिन और वर्ष समय की मौलिक मापें हैं, जिन्हें प्रकृति ने हमें दिया है। बाकी माप तो हमने स्वयं बनाई हैं। रात और दिन को 24 की बजाए 16 या 40 घंटों में भी विभाजित किया जा सकता है। इसी तरह घंटे को भी 60 के बजाए 100 मिनट का और मिनट को 100 सेकेंड का (या मनचाहे सेकेंडों का) बनाया जा सकता है। पर रात और दिन को लंबा या छोटा करना संभव नहीं है। न ही हम पृथ्वी को सूर्य की परिक्रमा तेज़ या धीमी चाल से करने के लिए मजबूर कर सकते हैं।

हम बात कर रहे थे समय मापने की। पृथ्वी की गति तो हम देख नहीं सकते। पर पृथ्वी की गति के कारण ही सूर्य हमें उगता और झूबता प्रतीत होता है। हजारों साल पहले मानव के पास समय मापने का एक मात्र साधन यही सूर्य था। आकाश में सूर्य की स्थिति देखकर ही वह सुबह, दोपहर या शाम का अंदाज़ा लगाता था। आज भी इस तरीके का उपयोग किया जाता है पता नहीं तुमने कभी ध्यान दिया है या नहीं। एक और चीज़ है, जिससे समय का अंदाज़ा लगाया जा सकता है वह है चीज़ों की छाया, जो धूप में बनती है। क्या किसी खंभे, पेड़ या तुम्हारी अपनी छाया की लंबाई दिन भर एक-सी रहती है? नहीं न! बस इसी तथ्य का इस्तेमाल करके पहली घड़ी यानी धूपघड़ी बनी।

कहते हैं यूनान में कहाँ एक बहुत ऊँचा खंभा था। लोगों ने देखा कि दोपहर के समय उसकी परछाई सबसे कम लंबी होती है और सुबह-शाम अधिक। उन्होंने उस परछाई की लंबाई अपने क्रदमों से अलग-अलग



समय पर नाप ली। जब उन्हें समय पता करना होता, आकर झट से खंभे की परछाई की लंबाई नाप लेते हैं न मज़ेदार! पर इस घड़ी को या यूं कहें खंभे को साथ ले जाना मुश्किल था।

साथ ले जाने वाली ऐसी ही एक धूपघड़ी का प्रचलन किसी समय भारत में था। साधु और बाज़ीगर इस घड़ी का उपयोग करते थे। यह घड़ी एक छड़ी पर बनी होती थी। चौकोर छड़ी पर घंटों के निशान लगे थे। छड़ी के एक सिरे पर एक रस्सी बंधी थी और उससे कुछ नीचे एक सुई छड़ी पर आड़ी लगी होती थी। इस सुई की परछाई छड़ी पर जहां पड़ती, वहां का निशान देखकर समय बताया जा सकता था। इस छड़ी-घड़ी में न केवल सूर्य की गति का ध्यान रखा गया था बल्कि चारों ऋतुओं के लिए छड़ी के अलग-अलग फलक पर निशान लगाए गए थे।

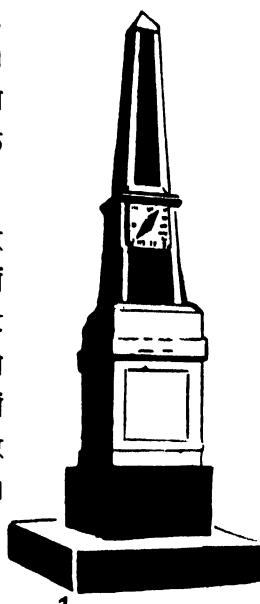
बाद में धूप में बनने वाली छाया के आधार पर ही सूर्यघड़ी बनी। एक वृत पर जो बारह हिस्सों में बंटा था, बीचों-बीच लोहे की एक तिकोनी प्लेट सीधी लगाई जाती थी। इस प्लेट की परछाई घड़ी की सुई की तरह काम करती थी। जब सूरज आकाश में धूमता, तो इस प्लेट की परछाई भी डायल (वृत) पर धूमती थी, इससे समय का अंदाज़ लगाया जाता था।



4.

ऐसी घड़ियां दो शहरों के बीच पड़ने वाले मील के पथर पर लगा दी जाती थीं, ताकि यात्रा करने वाले समय पता कर सकें।

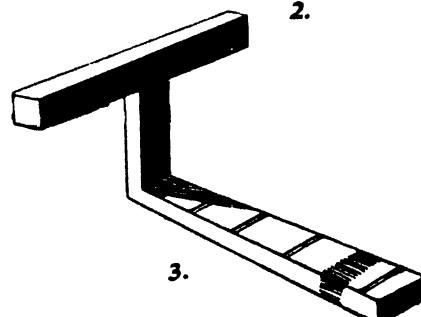
पर धूपघड़ी और सूर्यघड़ी सिर्फ़ दिन में ही काम आती थीं। जब मौसम खुराब होता या सूरज दिखाई नहीं देता, तब इन घड़ियों का उपयोग नहीं हो सकता था। पर समय मापन के तरीकों की खोज में धूपघड़ी ने एक अध्याय जोड़ा था। कई अलग-अलग तरह की सूर्य घड़ियां बनाई गईं और उनका बहुत समय तक उपयोग होता रहा।



1.

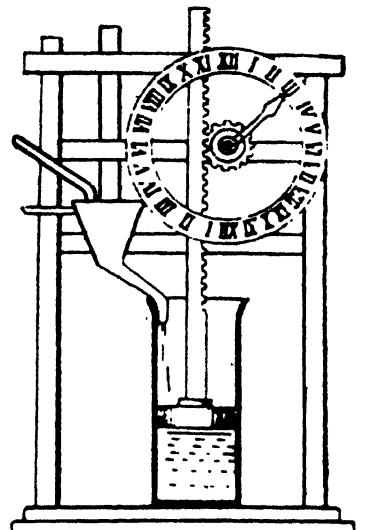
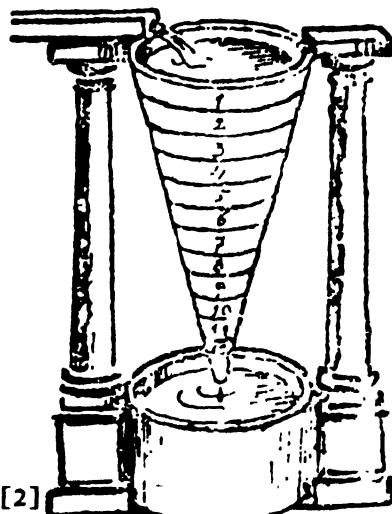
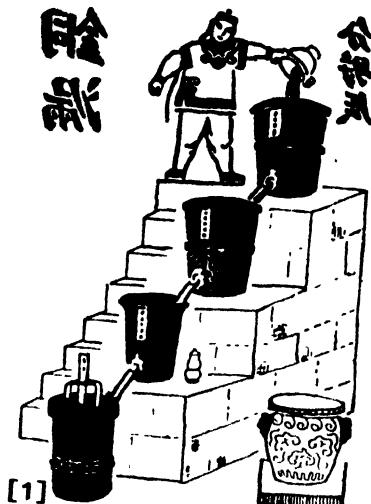


2.



3.

1. यूनानी सूर्यघड़ी
2. दसवीं शताब्दी में इंग्लैण्ड में इस्तेमाल की जाने वाली एक घड़ी।
3. आठवीं शताब्दी के पहले इस्तेमाल की जाने वाली एक मिस्त्री छाया घड़ी। घड़ी लकड़ी की बनी है।
4. अठारहवीं शताब्दी तक इस्तेमाल की जाने वाली एक सुंदर धूपघड़ी। यह लोहे की बनी है और न्यूयार्क शहर के एक बगीचे में लगी है।



1. चीनी जलघड़ी। 2. एक अधिक विकसित जलघड़ी, सोचो पानी का बर्तन शंखाकार क्यों बनाया गया था? 3. जलघड़ी जिसमें डायल भी था और सुई भी। पानी बूंद-बूंद करके नीचे बरतन में गिरता था और दांतेदार स्केल को ऊपर उठाता था। स्केल सुई के चक्र को घुमाता था।

कभी-कभी हम अपनी बातचीत में कहते हैं, “अरे यार उस घटना के बाद तो कितना पानी बह गया नर्मदा में (या अन्य किसी नदी)।” यानी हम समय की एक लंबी अवधि को बताने का प्रयत्न करते हैं। पर एक जामाने में समय मापने के लिए पानी का ही उपयोग किया जाता था। जलघड़ी की कल्पना तुम इस तरह कर सकते हो,—एक मटका है, जिसकी तली में एक इतना बड़ा छेद है कि पानी बूंद-बूंद करके गिरता है। मान लो मटका खाली होने में एक घंटा लगता है। खाली होने पर उसमें दुबारा पानी भर दिया जाए तो वह घंटे भर बाद खाली होगा। इस तरह हम इससे समय माप सकते हैं। इसी आधार पर कई अलग-अलग प्रकार की मज़देदार जलघड़ियां बनीं। और कुछ घड़ियों में तो जल की जगह दूध का उपयोग किया जाता था। यूनानी और रोमानी अदालतों में भाषण, बयान आदि की अवधि निर्धारित करने के लिए जलघड़ी का उपयोग करते थे।

जलघड़ियों में रात-दिन होने से यानी सूरज के निकलने न निकलने से कोई फर्क नहीं पड़ता था, पर इनकी भी अन्य समस्याएँ थीं। तुम्हीं सोचो क्या दिक्कतें आतीं होंगी जलघड़ियों के साथ?

बहुत समय तक जलघड़ियां फ्रांस तथा अन्य यूरोपीय देशों में प्रचलित नहीं हुई थीं। किसी राजा-महाराजा के यहां एकाध जलघड़ी होती थी, शेष सारी जनता बिना घड़ी के ही काम चलाती थी। लेकिन गिरजाघर के पुजारियों का काम बिना घड़ी के नहीं चल सकता

था। उन्हें दिन में आठ बार गिरजे की घंटियां बजानी होती थीं।

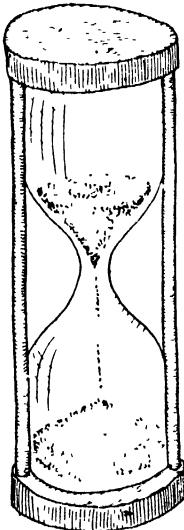
पुजारियों की समस्या कुछ हद तक हल की अग्नि घड़ियों ने। यह सोचा गया कि यदि किसी दिए में तेल भरकर जलाया जाए तो तेल के जलने के आधार पर समय का अंदाज लगाया जा सकता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर मोमबत्तियों का भी उपयोग किया गया। पूरी रात को तीन मोमबत्तियों

प्राचीन अग्नि घड़ियां। 1. मोमबत्ती घड़ी। 2. तेलघड़ी, तेल के बर्तन पर लगे पैमाने को देखकर, यह पता किया जाता था कि कितना तेल जल गया है। एक निश्चित समय में तेल की निश्चित मात्रा जलती थी। 3. जलती हुई रस्ती की लंबाई नापकर समय पता किया जाता था। प्राचीन अफ्रीका में इसका उपयोग होता था।



में विभाजित किया गया। दो मोमबत्तियों के जल जाने का अर्थ था, रात दो तिहाई बीत चुकी है। मोमबत्तियों पर निशान भी लगा दिए जाते थे, जिससे समय के और छोटे हिस्से का हिसाब भी रखा जा सके। ऐसे लैप भी बने जिनमें एक पैमाना होता था जो उसमें भरे तेल के जलने की मात्रा बताता था। और इस मात्रा का संबंध एक निश्चित अवधि से होता था।

कहते हैं आवश्यकता आविष्कार की जननी है। जैसे-जैसे दुनिया और उसमें रहने वाले मानव ने प्रगति की, समय मापन की बेहतर प्रणाली की ज़रूरत भी महसूस होती गई। इसी ज़रूरत से निकली एक अधिक विश्वसनीय घड़ी। यह थी रेतघड़ी। इसे धूलघड़ी भी कहा जाता है।



रेतघड़ी का प्रचलन भारत में भी था और इसे धंटिका यंत्र के नाम से जाना जाता था। ऐसी ही एक रेतघड़ी सिंधु घाटी में प्राप्त हुई है। इसे शीशे के दो गोलक जोड़कर बनाया जाता था। दोनों गोले एक संकरी नली से आपस में जुड़े होते थे। एक गोले में महीन सूखी रेत भर दी जाती। समय का पता लगाने के लिए रेत से भरा गोला ऊपर की तरफ रखा जाता था। रेत धीरे-धीरे नीचे वाले गोले में गिरने लगती और एक निश्चित समय के बाद ऊपर का गोला पूरा खाली हो जाता। गोले में रेत कम हो या ज्यादा वह हमेशा एक निश्चित गति से ही नीचे गिरती है। समय मापन का यह तरीका अत्यंत सफल रहा। जल्द ही ऐसी घड़ियां बन गईं, जिनमें चार गोले थे। एक गोला $1/4$ घंटे का, तीसरा $3/4$ और चौथा पूरा घंटा मापता था।

कैसे गिने जाते हैं घंटे?

आजतोर पर हम एक दिन (रात और दिन) को बारह-बारह घंटों के दो हिस्सों में विभाजित करते हैं। लेकिन घंटे मध्याह्न-सूर्य की स्थिति से ही गिने जाते हैं। मध्याह्न से दोपहर तक पहले बारह घंटे पूर्वाह्न (मध्याह्न से पहले) या AM (एंटी मेरिडियन) तथा दोपहर से अर्धरात्रि तक के बारह घंटे पश्चात्त (मध्याह्न से पश्चात्) या PM (पोस्ट मेरिडियन) कहलाते हैं।

पूर्वाह्न और पश्चात्त से उत्तरप्र छोड़े वाली संभावित गड़बड़ से बचने के लिए रेत, सेना, हवाई-जहाज, जहाज, डाकनार आदि जैसे कार्यों में 24 घंटे वाली घड़ी इस्तेमाल की जाती है। इस घड़ी में रात्रि 10-00 बजे को 22-00 से दर्शाया जाता है। इसी तरह दिन के 1-00 बजे को 13-00 से दर्शाया जाता है।

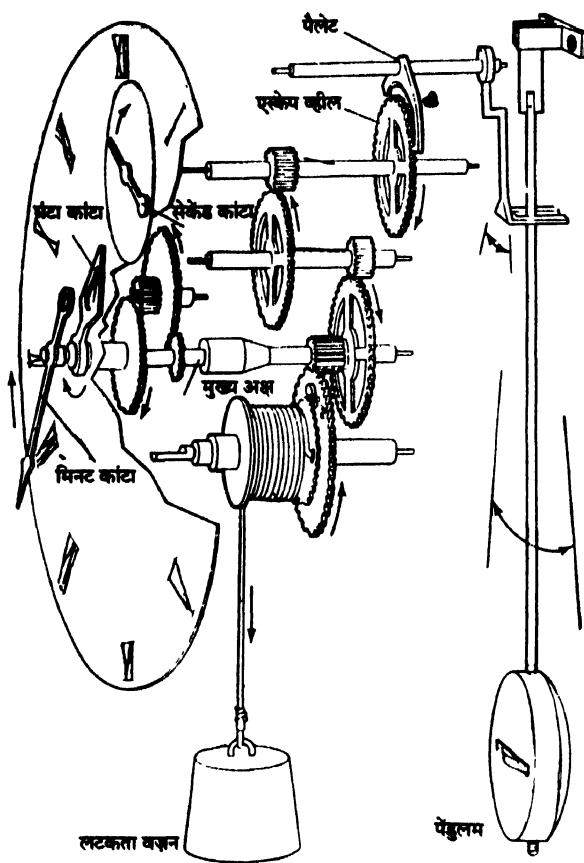
कभी रेत्वे स्टेशन पर लगे टाइम टेबिल को देखो। या कभी लैटर बाक्स पर डाक निकलने का समय बताने वाली फट्टी देखो।

पहले दिनों की गिनती भी एक दोपहर से दूसरी दोपहर तक की जाती थी और उसी हिसाब से तारीख बदलती थी। लेकिन 1928 में अंतर्राष्ट्रीय खगोलीय संघ ने दिन की गिनती अर्धरात्रि से दूसरी अर्धरात्रि तक करने की शुरूआत की। और तारीख भी अर्धरात्रि से बदली जाने लगी।

धूपघड़ी, सूर्यघड़ी, जलघड़ी, रेतघड़ी और अग्निघड़ियों का एक पूरा युग था, लेकिन वह भी बीत गया। पर अपने पीछे प्रयोगों और अनुभवों का ऐसा ख़ज़ाना छोड़ गया जिसकी बुनियाद पर यांत्रिक घड़ियों का युग शुरू हुआ।

देर सारे कल-पुर्जों वाली घड़ी का आविष्कार कब हुआ, यह कहना कठिन है। पर इतना तय है कि हम जो छोटी सी डिबिया आज देखते हैं वह शुरू में ऐसी नहीं थी। कल-पुर्जों से लदी-फदी घड़ी के प्राथमिक रूप का विवरण सन् 1250 ईस्वी के आसपास मिलता है।

ये घड़ियां कई टन भारी होती थीं। लोहे की बनी इन घड़ियों को गिरजाघरों तथा ऐसी ही अन्य ऊंची बिल्डिंगों पर लगाया जाता था। इनमें डायल नहीं होते थे। घड़ियों को चलाने के लिए नीचे की ओर सरकते हुए भार का इस्तेमाल किया जाता था। अगर तुमने गांव में किसी कुएं पर लकड़ी से बनी ढोल के आकार की घिरीं और उस पर लिपटी रस्सी देखी हो तो तुम इस घड़ी की कल्पना कर सकते हो। ऐसे ही एक ढोल पर रस्सी लिपटी होती थी। रस्सी के एक सिरे पर भार लटका होता था। ढोल के सिरे पर घंटी लगी सुईयां थीं जो भार के कारण ढोल के घूमने पर, घूमकर या बजकर घंटों का संकेत देती थीं। लेकिन ये घड़ियां 25



लटकते बजन से चलने वाली एक घड़ी। बजन के खिसकने की गति पर नियंत्रण के लिए पेंडुलम का इस्तेमाल किया गया है। पेंडुलम से जुड़ा पैलेट, एस्केप व्हील की गति को नियंत्रित करता है। चित्र में दिखाए तीरों की दिशा से घड़ी की कार्यविधि समझने की कोशिश करो।

भरोसे लायक नहीं थीं, क्योंकि दिन भर में ही वे घंटा-घंटा भर आगे-पीछे हो जाती थीं। हालांकि भार के नीचे सरकने की गति पर नियंत्रण रखने के लिए उनमें एक नियंत्रक की व्यवस्था भी थी।

सन् 1389 तक घड़ियों को बेहतर बनाने की दिशा में बहुत काम हो चुका था। पर ये सारी की सारी घड़ियां ऐसी थीं जिनमें समय को कभी-भी ठीक-ठीक नहीं मापा जा सकता था। सबमें कुछ न कुछ व्यवहारिक खामियां थीं। सबसे बड़ी खामी तो यही थी कि उनमें जो माप इस्तेमाल किया जाता, वह घट या बढ़ जाता था। लोग लगातार इस बात पर विचार कर रहे थे कि ऐसी क्या चीज़ हो सकती है जो घटे या बढ़े नहीं और उसका उपयोग समय मापन में किया जा सके?

गैलीलियो गैलिली के नाम से तो तुम अपरिचित नहीं हो। गैलीलियो ने ही पहली बार यह कहा था

कि, सूर्य नहीं बल्कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है। और इस बात को कहने के कारण उन्हें बहुत यातनाएं सहनी पड़ी थीं। बहरहाल... गैलीलियो ने 1581 के आसपास एक ऐसा सिद्धांत खोज निकाला, जिसके आधार पर घड़ियों ने एक लंबी छलांग भरी।

गैलीलियो ने गिरजाघर में लटकते लैप को दाएं से बाएं हिलते देखा। गैलीलियो का ध्यान इस बात पर गया कि लैप अपने स्थान से दाएं जाने में जितना

मानक समय यानी जी एम टी टाइम

हम यह जानते हैं कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है। लेकिन परिक्रमा के दौरान पृथ्वी का वेग पूरे वर्ष घटता-बढ़ता रहता है, इससे सौर दिन बराबर लंबाई के नहीं होते हैं। इस समस्या के हल के लिए साल भर के सौर दिनों की औसत अवधि निकाली गई और उसे औसत सौर दिन कहा गया। इस औसत सौर दिन की अवधि को 24 बराबर कालखंडों में बांटा गया।

पृथ्वी के अनियमित वेग के कारण संसार में अलग-अलग स्थानों पर दोपहर के समय में फर्क होता है। आज से वर्षों पहले जब विभिन्न नगरों की घड़ियां अलग-अलग समय बताती थीं, इससे थोड़ी-थोड़ी दूर पर भी काम करने के लिए समय निश्चित करने में कठिनाई होती थी। 1883 में संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा ने रेलों के लिए मानक समय की एक प्रणाली स्वीकार की। 1884 में वाशिंगटन में आयोजित एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में अन्य देशों में भी ऐसी ही व्यवस्था स्थापित करना स्वीकार किया गया।

ग्रीनविच, इंग्लैंड की रॉयल वेधशाला में 0° से आरंभ करके पृथ्वी की 360° को $15-15^{\circ}$ के 24 समय क्षेत्रों में बांटा गया है। इन समय क्षेत्रों को ध्रुववृत्त या मेरीडियन कहा जाता है। हर दो समय क्षेत्रों के बीच का अंतर एक घंटे को दर्शाता है। ग्रीनविच वेधशाला में, ग्रीनविच मीन टाइम (जी एम टी) रिकार्ड किया जाता है। यह समय का एकदम सही मानकीकरण होता है, इसी पर पृथ्वी के अन्य स्थानों का समय निर्धारित है।

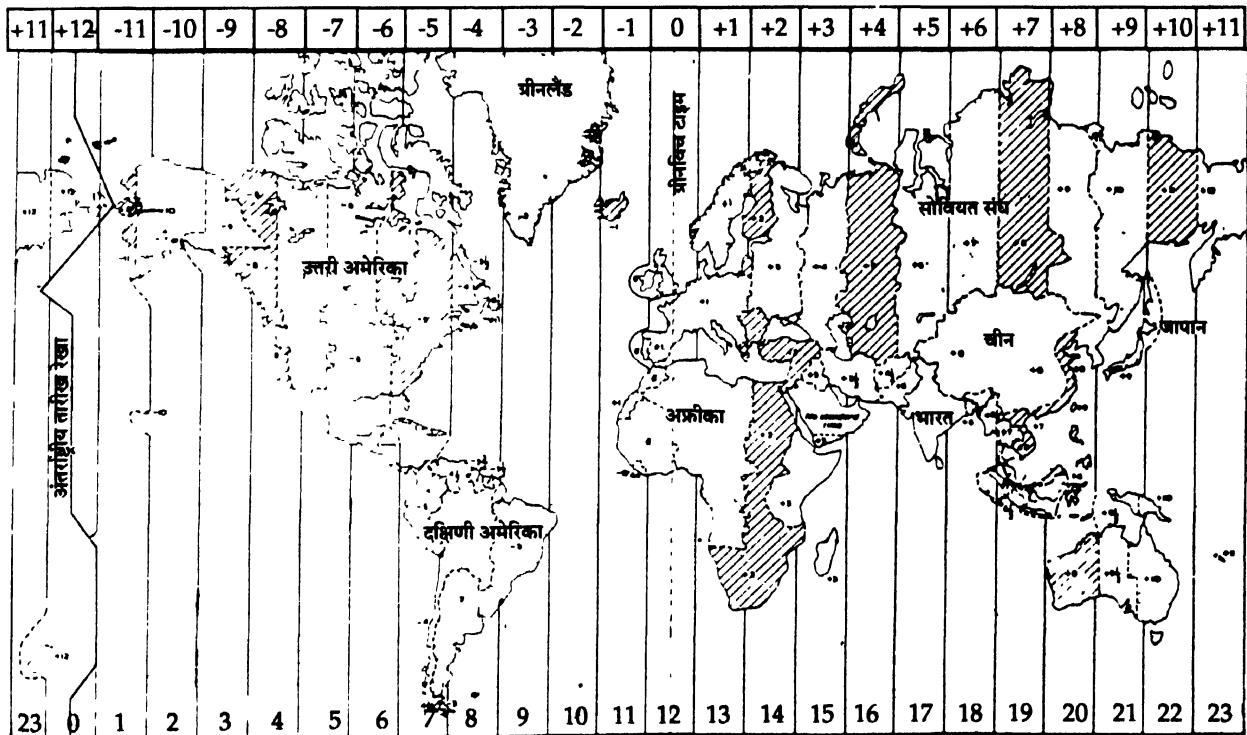
ग्रीनविच में सूर्य जब मुख्य मेरीडियन के ऊपर होता है तो दोपहर के बारह बजते हैं। पूर्व की ओर अगले समय क्षेत्र में दोपहर का एक बजता है। पश्चिम

समय लेता है उतना ही समय बाएं जाने में। गैलीलियो ने इस संबंध में और प्रयोग किए। और अपने प्रयोगों के निष्कर्ष पर दोलन से संबंधित सिद्धांत प्रतिपादित किया। उन्होंने पाया कि यदि किसी भार को धागे या रसी में बांधकर लटका दिया जाए, तो वह अपने दाएं-बाएं एक निश्चित गति से दोलन करता है। गैलीलियो ने दोलन के उपयोग से घड़ी बनाने का प्रयत्न किया, पर वह अपने जीवनकाल में यह कार्य पूरा नहीं कर

की ओर अगले समय क्षेत्र में ग्यारह बजते हैं।

इंडियन स्टैंडर्ड टाइम (आई एस टी) का आधार वह मेरिडियन है जो मिर्जापुर, उत्तरप्रदेश से गुजरता है। यह मेरिडियन ग्रीनविच के 82.5° पूर्व में है।

जब ग्रीनविच में दोपहर के 12 बजते हैं तो भारत में शाम के 5.30 बजते हैं। आई एस टी नेशनल फिजीकल लेबोरटरी, दिल्ली द्वारा निर्धारित किया जाता है और इसी आधार पर बाकी सब स्थान अपना समय सही करते हैं।



चित्र में देखो कि विश्व को किस प्रकार 24 समय क्षेत्रों में बांटा गया है। प्रत्येक भाग 15° का है और एक डिग्री चार मिनट के बराबर है। 180° देशांतर रेखा के पास से अंतर्राष्ट्रीय तारीख रेखा गुजरती है। यहां से दिन आरंभ होता है। इस रेखा के दोनों ओर दो अलग-अलग दिन होते हैं। यदि हम रविवार को पश्चिम से चलकर तारीख रेखा को पार करते हैं तो दिन (रविवार) बीता हुआ कल यानी शनिवार हो जाता है। यदि पश्चिम की ओर ही चलते हैं आगे बाला कल रविवार हो जाता है। पूरी पृथ्वी पर एक ही दिन केवल उस क्षण होता है जब तारीख रेखा पर अर्धरात्रि होती है। चित्र में ऊपर की तरफ बनी तालिका में समय क्षेत्रों के साथ लिखी संख्या, ग्रीनविच में बाहर बजने पर वहां का समय बताती है। (-) चिन्ह ग्रीनविच समय से पीछे, और (+) चिन्ह ग्रीनविच समय से आगे चलना बताता है।

सका। 1656 में क्रिस्टियन यूजीन्स नामक डच खगोल शास्त्री ने पहली व्यवहारिक पेंडुलम (दोलक) घड़ी बनाई।

तुम भी ऐसा दोलक बना सकते हो, जिसका बाई और दाई ओर का एक दोलन पूरे एक सेकेंड में होता हो। (देखो अपनी प्रयोगशाला)।

पेंडुलम वास्तव में घड़ी में नियंत्रण का काम करता है। वह भार वाली घड़ियों में लटकते हुए भार

वैज्ञानिक कार्यों के लिए अब जी एम टी के स्थान पर कोआडिनेट यूनिवर्सल टाइम (यू टी सी) इस्तेमाल किया जाता है। इसके लिए आंकड़े संसार की परमाणु घड़ियों से पेरिस में एकत्रित किए जाते हैं। तुमने अखबारों में पढ़ा होगा कि 1991 का साल एक सेकेंड की देरी से आया है। वैज्ञानिकों के अनुसार यह देरी पृथ्वी की परिक्रमा की रफ्तार धीमी होने के कारण हुई है। यह जानकारी भी पेरिस स्थित अंतर्राष्ट्रीय पृथ्वी परिक्रमा सेवा ने दी थी।

घंटे, मिनट और सेकेंड

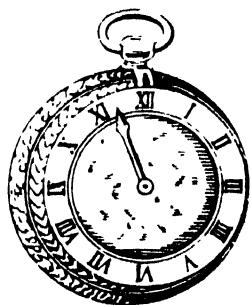
वर्ष, माह, रात और दिन जिस आधार पर बने वह तुमने 'कथा कैलेंडर भी' लेख में देखा था (वास्तविक ज्ञानी, 91)।

जिस, धूमन और रोप के लोगों ने दिन और रात को बारह-बारह घंटों में बांट रखा था। दिन के बारह घंटे अलग होते थे और रात के बारह घंटे अलग। लेकिन दिन और रात तो बरबर नहीं होते। गणियों में दिन बड़ा और रात छोटी होती है, तो जहाँ में दिन छोटा और रात बड़ा। इस कारण से जिस में गणियों में दिन का एक घंटा आज के सत्तर मिनट के बरबर होता था, जबकि जहाँ में दिन का एक घंटा आज के पचास मिनट के बरबर होता।

इस तरह के विभाजन से उस समय चलने वाली जल घड़ियां भी हर मौसम के लिए बनानी होती थीं। हालांकि बाद में जलघड़ियों में ऐसे सुधार किए गए, जिससे उनका उपयोग हर मौसम में हो सके।

बाद में रात और दिन के कुल समय को चौबीस घंटों में और चौबीस घंटों को बारह-बारह घंटे के दो हिस्सों में बांटा गया।

फिर एक घंटे को 60 मिनट और मिनट को 60 सेकेंड में बांटा गया। यह विभाजन बोलिनोन के खगोलविज्ञानी



से धूमने वाले पहियों की गति को नियंत्रित और नियमित करता है। तुम्हरे घर में या कहीं आसपास पेंडुलम वाली घड़ी हो तो उसमें पेंडुलम के काम करने का तरीका देखो।

पर इन घड़ियों में भी मुख्य आधार लटकता हुआ बजना था, जिनकी मदद से वे चलती थीं। कहीं अपनी दुनिया में खोया एक घड़ीसाज लगातार यह सोच रहा था कि ऐसा कुछ किया जाए ताकि घड़ी चलाने के लिए बड़े भार की ज़रूरत ही न पड़े। पीटर हैनलीन नामक इस घड़ीसाज के दिमाग में आया कि क्यों न घड़ी में सिंग का उपयोग किया जाए। अब यह तो तुम जानते ही हो कि सिंग की खासियत है कि उसे कितना भी ऐंठ दो, वह हमेशा अपनी पुरानी स्थिति में वापस आना चाहता है। बस पीटर ने इसी गुण का

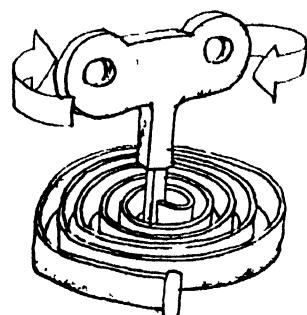
नोट किया था। बोलिनोन की अंक यद्दृशि 60 पर आवाहित थी। उन्होंने वृत की परिधि को 360 हिस्सों में बांटा था। प्रत्येक घड़ियों को 60 मिनट और प्रत्येक मिनट को 60 सेकेंड में बांटा था। हम आज भी वृत की परिधि को 360 आधार पर बांटते हैं।

पर व्यवहारिक रूप में सिर्फ घंटे का उपयोग ही होता था। मिनट की सुई घड़ियों के डायल पर अठरहाईं शताब्दी के आरंभ में और सेकेंड की सुई उभीसवीं शताब्दी के आरंभ में दिखाई दी।

समय का यह विभाजन तब से ऐसा ही चला आ रहा है। हाँ, आधुनिक विज्ञान ने सेकेंड को नामों सेकेंड और पाइके सेकेंड में भी विभाजित कर लिया है।

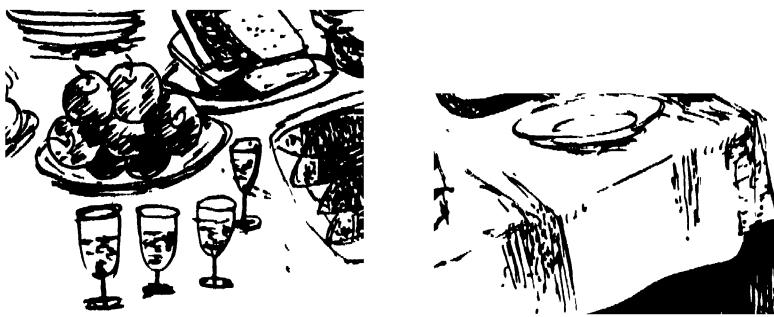
प्राचीन भारत में एक दिन का विभाजन तीस मुहूर्तों में किया गया था (तब दिन रात एक साथ गिने जाते थे)। प्रत्येक मुहूर्त का एक विशेष नाम था। इसका उत्तरेख ऋष्येद और अथर्ववेद में मिलता है। मुहूर्तों को भी प्रति मुहूर्त में बांटा गया था।

प्राचीन भारत के महान गणितज्ञ तथा खगोलशास्त्री आर्यभट्ट ने अपने ग्रन्थ आर्यभट्टीय में समय की इकाइयों पर विचार किया है। उन्होंने एक दिन को 60 नैङ्गी और एक नैङ्गी को 60 विनाड़ियों में बंटे होने की बात लिखी है।



उपयोग किया। पीटर ने ही पहली जेबघड़ी बनाई, जिसमें सिंग का उपयोग किया गया था।

जेबघड़ी के भीतर पीतल का एक चपटा-सा बक्स होता था, यह ड्रम कहलाता और इसमें वह इंजन बंद रहता, जो घड़ी को चलाता है यानी सिंग। इस सिंग का अंदर चाला सिरा स्थिर होता था और उस एक्सल से जुड़ा होता है जिस पर ड्रम रखा रहता है सिंग का बाहर चाला सिरा ड्रम की दीवार से जुड़ा होता। जब घड़ी में चाबी भरते, तो ड्रम को घुमाया जाता और ड्रम के साथ-साथ सिंग भी घूमता। सिंग में ऐंठन भर जाती। जैसे ही चाबी छोड़ी जाती ऐंठन खुलने लगती और सिंग अपनी पहली स्थिति में वापस आने की चेष्टा करता। ड्रम वापसी में उतने ही चक्र लगाता, जितने उसे घड़ी में चाबी भरते समय लगाए थे।



यहां मार्था के आश्वर्य या ग्रॉबिन की खुशी का वर्णन करने नहीं जा रहा हूँ।

“अब तुम एक प्रसिद्ध मनूष्य हो,” ग्रॉबिन बोली “तुम्हें अब हमसे कोई अलग नहीं कर सकता।”

चाचा जी की यात्रा पर पहले तो लोग विश्वास ही नहीं कर रहे थे। लेकिन क्योंकि हैस हमारे साथ ही था और कुछ मित्रों को भी मेरी यात्रा का हाल मालूम हो चुका था इसीलिए कुछ लोगों को हमारी यात्रा की कहानी पर विश्वास होने लगा। इस यात्रा के

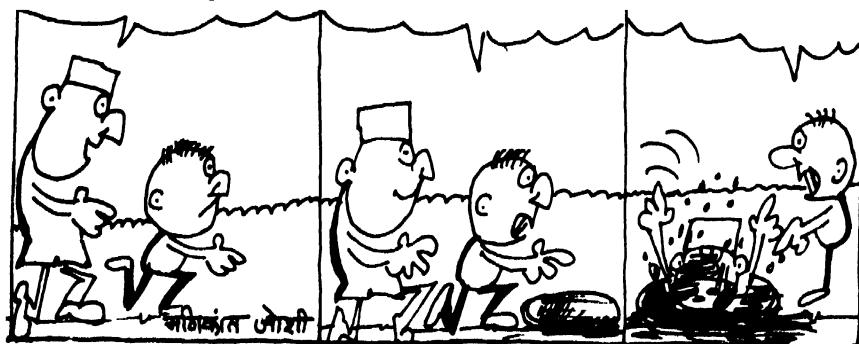
कारण चाचा जी अब महान् व्यक्तियों में से गिने जाने लगे। और उनके साथ मैं भी। फिर तो हमारा बड़ा सम्मान हुआ—खूब दावतें खाने को मिली। चाचा जी के शत्रुओं ने उनकी आलोचना भी खूब की। उनका काफ़ी विरोध भी हुआ।

(समाप्त)

जूलेवर्न के उपन्यास ‘ए जर्नी इन ट्रू दी सेटर ऑफ अर्थ’ का अनुवाद। अनुवादक : प्रभात किशोर मिश्र। सौजन्य : इंडियन प्रेस, इलाहाबाद। सभी चित्र : शोभा घारे।

टॉल्ड पुल्टर जरा बताओ
जितियाँ कितने प्रकार
की होती हैं...?

धूर्णजाति, दोलनजाति,
ल्लोटनजाति,
और...
दुर्गीति



33

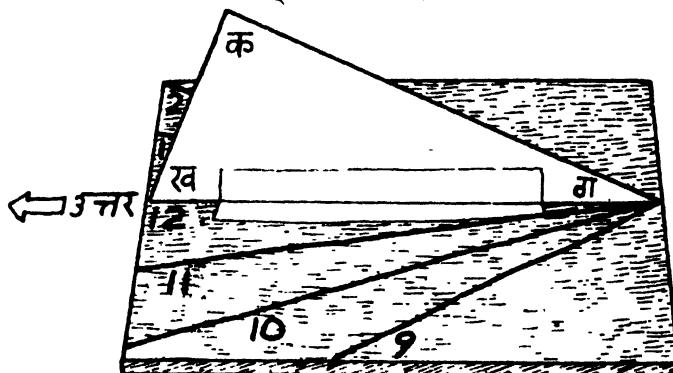
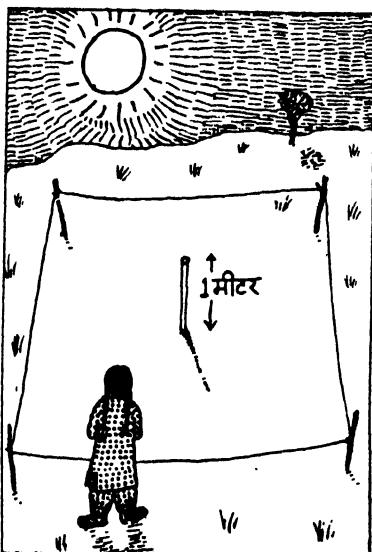
अपनी प्रयोगशाला

देखा कि एक ज्ञाने में समय मापने के लिए १-कैसी जुगत मिडानी पड़ती थी। अब तो हमारे पास घड़ी होती है, इट से देखकर समय पता कर लेते हैं। आओ, इस बार अपनी प्रयोगशाला में समय मापने के विभिन्न तरीकों पर आधारित कुछ प्रयोग करते हैं।

ज़मीन में गड़ी, छड़ी की घड़ी

यह प्रयोग करने के लिए ऐसा दिन चुनना होगा, जब आसमान साफ़ हो और धूप खिली हो। प्रयोग सुबह नौ बजे से शाम चार बजे तक चलेगा। ऐसा इसलिए कि आमतौर पर नौ से पहले और चार के बाद पड़ने वाली परछाई इतनी लंबी और धुंधली होती है कि उसे नापना कठिन होता है। अगर तुम नाप सकते हो तो अच्छी बात है।

एक मीटर से कुछ अधिक लंबी छड़ी लो। छड़ी पर एक मीटर की लंबाई पर निशान लगा लो। अब छड़ी को किसी ऐसे स्थान पर लंबवत् गाड़ो, जहां अधिक से अधिक समय तक धूप रहती हो। छड़ी इस तरह गाड़ो कि छड़ी का ठीक एक मीटर हिस्सा ज़मीन से बाहर रहे। गाड़ने के लिए ऐसी जगह चुनो जहां कोई उसे हिलाए-डुलाए नहीं। जगह ऐसी भी होनी चाहिए जो समतल हो तथा उस पर दिन भर प्रयोग के दौरान किसी पेड़ या मकान आदि की छाया न पड़े। तुम चाहे तो सुरक्षा के लिए छड़ी के चारों ओर ज़मीन पर एक चौकोर खोंचकर उसके चारों कोनों पर एक-एक



छड़ी या खूंटी गाड़ लो और उन पर एक रस्सी बांधकर घेरा बना लो।

अब छड़ी के ऊपरी सिरे की परछाई ज़मीन पर जहां पड़े वहां परछाई के सिरे पर निशान लगाकर उस पर पतली खूंटी या लंबी कील गाड़ दो, साथ ही परछाई की लंबाई भी नाप लो। यह अवलोकन घड़ी की मदद से हर आधे घंटे बाद लो और निशान लगाकर खूंटी या कील गाड़ते जाओ। साथ ही परछाई की लंबाई भी नोट करते रहो।

परछाई की लंबाई और समय की एक तालिका बनाओ। क्या तुम अगले दिन ज़मीन में गड़ी इस छड़ी की परछाई से समय बता सकते हो?

एक मजेदार बात, ज़मीन पर लंबवत् खड़ी हुई किसी भी चीज़ की सबसे कम लंबाई वाली परछाई हमेशा उत्तर-दक्षिण दिशा में पड़ती है। तुमने जो प्रयोग किया उसमें सबसे कम लंबाई वाली परछाई पर एक सीधी रेखा जो उत्तर-दक्षिण दिशा बताएगी, बना लो। इसका उपयोग तुम सूर्यघड़ी में करोगे।

सूर्यघड़ी

सूर्यघड़ी बनाने के लिए पुष्टे पर एक समकोण त्रिभुज का खंग बनाकर काट लो। जिसमें कोण ग तुम्हारे शहर के अक्षांश के बराबर हो और कोण क 90° का हो (चित्र देखो)। तुम्हारा शहर किस अक्षांश पर है, यह भारत के किसी नक्शे पर देख सकते हो।

इस त्रिभुज को लकड़ी के चौकोर तख्ते के बीचोंबीच लंबवत् खड़ा कर लो। त्रिभुज को खड़ा रखने के लिए भुजा खंग के साथ त्रिभुज के दोनों ओर कागज की पट्टियाँ चिपका दो।

अब तख्ते को समतल ज़मीन पर जहां दिन भर धूप आती हो, इस प्रकार रेखों कि त्रिभुज का आधार खग उत्तर-दक्षिण दिशा में हो और बिंदु खठंक उत्तर दिशा बताए। उत्तर-दक्षिण दिशा वाली रेखा जो तुमने पहले प्रयोग में बनाई थी, यहां इस्तेमाल कर सकते हो। या उत्तर-दक्षिण दिशा मालूम करने का और कोई तरीका तुम जानते हो तो इस्तेमाल करो। अब प्रातः नौ बजे से शुरू करके प्रत्येक घंटे पर त्रिभुज की भुजा खग की तख्ते पर पड़ रही परछाई पर रेखा खींचते जाओ। परछाई की रेखा पर समय भी लिखते जाओ।

इस सूर्यघड़ी से तख्ते पर परछाई की स्थिति देखकर तुम समय का पता लगा सकते हो। पर ध्यान रहे कि इस सूर्यघड़ी का उपयोग करते समय त्रिभुज का आधार खग ठीक उत्तर-दक्षिण दिशा में हो।

जलघड़ी

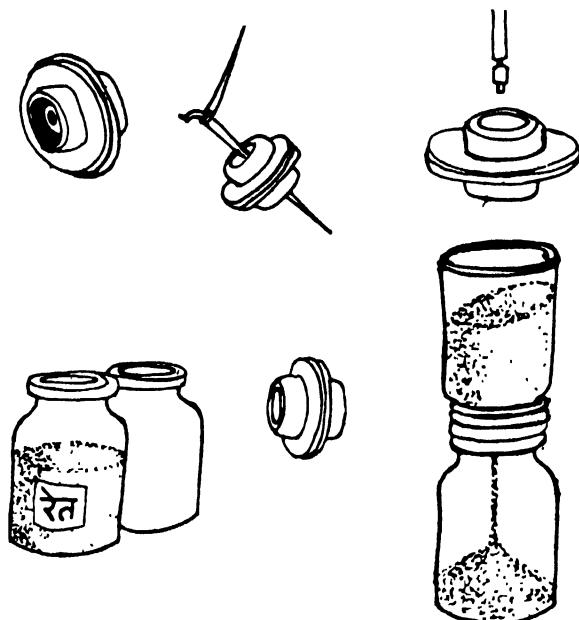
खुले मुह का एक टीन का डिब्बा लो और उसके पेंदे के बीच में कील से एक बारीक छेद कर दो। एक बाल्टी में साफ़ पानी भरकर डिब्बे को उसमें तैरा दो। छेद से डिब्बे के अंदर धीरे-धीरे पानी भरने लगेगा। अगर पानी नहीं भरता है तो छेद को थोड़ा बड़ा कर दो। छेद इतना बड़ा हो कि डिब्बा लगभग पांच मिनट में डूब जाए। अब डिब्बे के अंदर से सारा पानी निकालकर उसे फिर से पानी के ऊपर तैराओ और डूबने का समय घड़ी देखकर पता करो। इस क्रिया को कम से कम पांच बार दोहराओ। सोचो इससे कितनी अवधि का समय मापा जा सकता है?

रेतघड़ी

इंजेवशन की दो खाली शीशियां लो। ढक्कन भी होने चाहिए। ढक्कनों के सपाट हिस्सों पर पंचर सल्यूशन लगाकर उन्हें आपस में जोड़ दो।

अब बबूल के कांटे या कील से ढक्कनों के बीच में छेद करो। खाली बॉलपेन-रीफिल का लगभग आधा सेटीमीटर टुकड़ा लो। इस टुकड़े को किसी तरह दोनों ढक्कनों के बीच में छेद में फँसा दो। रीफिल का टुकड़ा थोड़ा गीला होने से आसानी से चला जाएगा। अब तुम्हें ढक्कनों के बीच रीफिल में से एक साफ़-सीधा छेद दिखेगा।

अब एक शीशी को सूखी बारीक रेत से भरो।



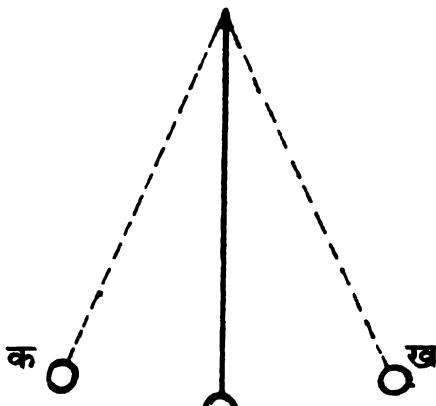
इस पर दोनों ढक्कन और दूसरी शीशी फिट कर दो। शीशियों को उलट दो। ऊपर की शीशी में भरी रेत रीफिल में से होती हुई नीचे की शीशी में गिरेगी। घड़ी में देखकर पूरे एक मिनट तक रेत गिरने दो। ऊपर की शीशी में बची रेत फेंक दो। इस तरह एक मिनट की रेतघड़ी बन जाएगी। बड़ी शीशियां इस्तेमाल करके समय की अधिक अवधि भी मापी जा सकती है। पर इससे मिनट से कम अवधि का समय नहीं मापा जा सकता है।

दोलक

दोलक के जिस गुण का उपयोग कर 17वीं शताब्दी में गैलीलियो ने घड़ी को ज्यादा सटीक समय बताने वाली बनाया था, उसे तुम भी देख सकते हो। दोलक के उपयोग से समय को सेकेंडों में मापा जा सकता है।

लगभग 2 मीटर लंबा धागा लो और उसके एक सिरे पर एक पथर अच्छी तरह से बांध लो। अब इस पथर को दरवाजे की चौखट में लगे कुंडे में, या कुंडा न हो तो कील ठोककर उससे, लटका दो। यह ज़रूरी नहीं है कि इसे चौखट में ही लटकाया जाए, कहीं भी लटकाओ, दोलक को झूलने के लिए जगह होनी चाहिए। साथ ही वहां तेज़ हवा आदि न हो।

इस तरह लटकता हुआ भार ही तुम्हारा दोलक है। पथर को एक ओर थोड़ा हटाकर छोड़ दो। ऐसा करने पर पथर स्वतंत्रतापूर्वक झूलना चाहिए। उसके इस झूलने को दोलन कहा जाता है। दोलक का क्षमता 35



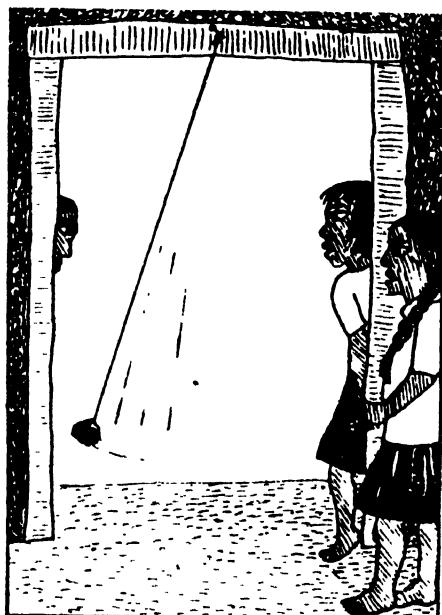
ख तक जाना और वापस क तक आना एक पूरा दोलन माना जाता है, चित्र देखो। यह ध्यान रखना कि दोलक को धक्का देकर नहीं चलाना है। बस एक तरफ को थोड़ा हटाओ और छोड़ दो।

घड़ी देखकर पता लगाओ कि तुम्हरे दोलक को एक दोलन करने में कितना समय लगता है? यह समय ही दोलक का दोलनकाल कहलाता है।

हो सकता है एक दोलन नापने में कठिनाई महसूस हो। एक साथ दस दोलनों का समय मापो। इसके आधार पर देखो कि एक दोलन में औसतन कितना समय लगा?

अब 20, 30, 40, 50 दोलन करने में दोलक को कितना समय लगता है देखो! अपने आंकड़े एक तालिका बनाकर लिखते जाओ।

हर बार का औसत दोलनकाल पता लगाओ। देखो कि क्या औसत दोलनकाल हर बार लगभग बराबर



आया?

दोलनकाल दोलक की लंबाई पर निर्भर करता है या धागे में लटके पथर के भार पर? इसके लिए दो प्रयोग करो।

दोलक की लंबाई का/ दोलनकाल पर प्रभाव

जिस बिंदु से दोलक लटकाया है उस बिंदु और पथर के बीच की दूरी को दोलक की लंबाई मानो। दोलक की लंबाई 20 सेटीमीटर रखकर उसके 50 दोलन का समय मापो। इसे तीन बार दोहराओ और 50 दोलनों में लगे समय का औसत निकालो। औसत निकालने के लिए तीनों बार लगे समय को जोड़कर 50 से भाग दो। अब दोलक की लंबाई 10-10 सेटीमीटर बढ़ाकर इस क्रिया को दोहराओ। ऐसा तब तक करते जाओ, जब तक दोलक की लंबाई 100 सेटीमीटर न हो जाए।

क्र.	धागे की लंबाई (सेमी.)	50 दोलन का समय (सेकेंड में)			औसत दोलनकाल
		1	2	3	
1.	20				
2.	30				
3.	40				
4.	50				
5.	60				
6.	70				
7.	80				
8.	90				
9.	100				

अपने आंकड़ों को तालिका में लिखो। तालिका के आधार पर देखो कि क्या दोलक की लंबाई बढ़ाने पर दोलनकाल पर क्या प्रभाव पड़ता है? इस आधार पर एक सेकेंड दोलनकाल वाले दोलक की लंबाई कितनी होनी चाहिए?

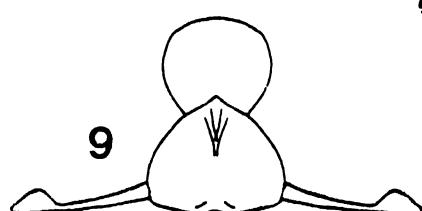
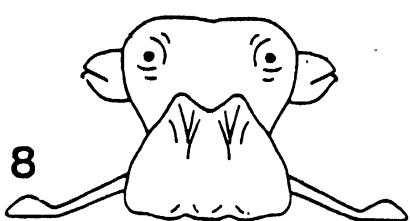
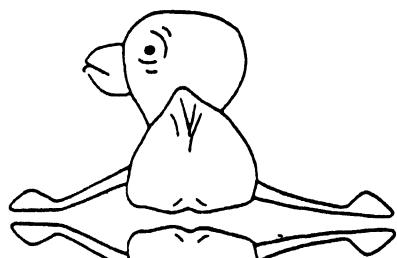
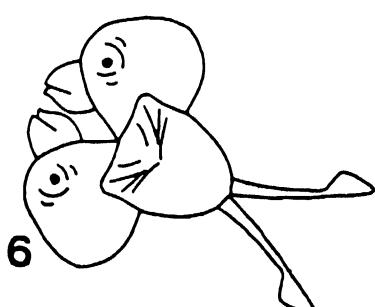
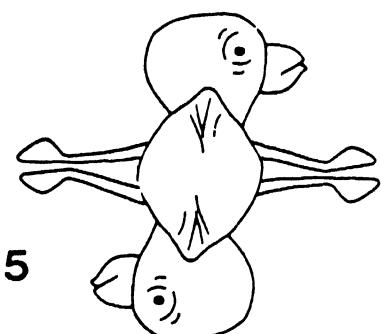
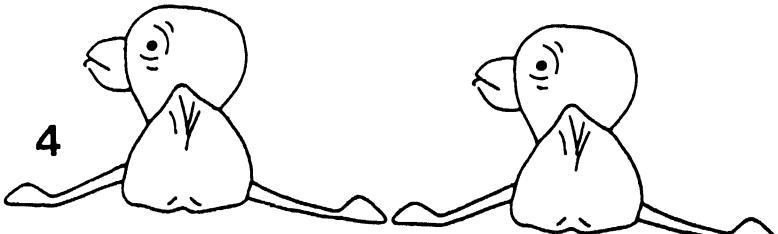
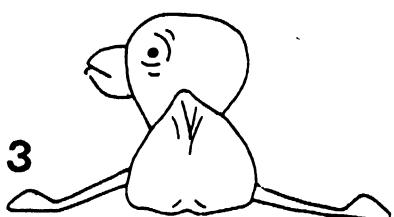
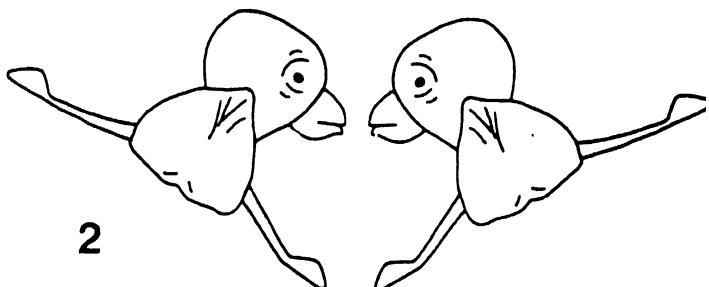
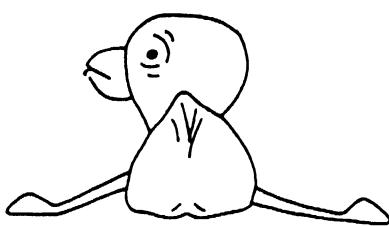
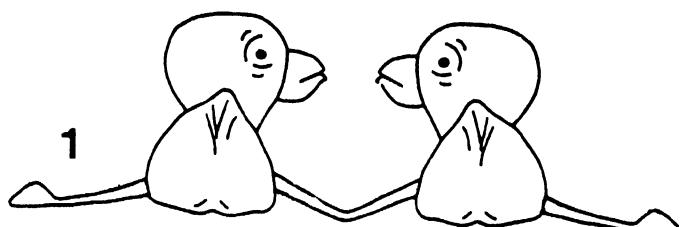
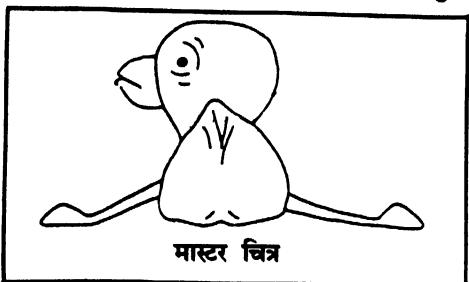
भार और दोलनकाल में संबंध

अलग-अलग वज़न के पथर लटकाने पर एक ही लंबाई के दोलकों के औसत दोलनकालों में क्या अंतर होगा, यह जानने के लिए दोलक की लंबाई स्थिर रखते हुए अलग-अलग वज़न के पथर लटकाकर औसत दोलनकाल पता करो।

(सामग्री तथा चित्र होमिशिका की बालवैज्ञानिक कक्षा 8 से साभार)

दर्पण के संग खेलो □

एक छोटा दर्पण या उसका टुकड़ा लो और मास्टर चित्र के पास रखकर उसका प्रतिबिंब देखो। प्रतिबिंब और मास्टर चित्र को मिलाकर एक नया चित्र बनता है। यहां दिए अन्य चित्र ऐसे ही बने हैं। दर्पण को थोड़ा आगे-पीछे खिसकाकर, तिरछा करके रखो और तुम भी बनाने की कोशिश करो!



माथा पट्टी

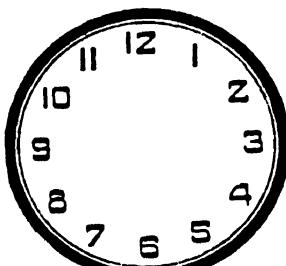
(1)

यह अंक पर है, तो क्यों न इस बार माथापच्ची पर ही हो जाए।

घड़ी तो तुम रोज ही देखते होगे। घड़ी में बारह बजे की स्थिति देखो। छोटी और बड़ी यानि घंटे और मिनट दोनों की सुईयां एक के ऊपर एक, एक ही जगह हैं। इस स्थिति में बड़ी की जगह छोटी सुई लगा दें, तब भी कोई फ़र्क नहीं पड़ेगा। पर दूसरी स्थिति में, जैसे 6 बजे, सुईयों की अदला-बदली करने पर क्या होगा? भई हमारा सवाल यह है कि घड़ी में सुईयां कब और कितनी बार ऐसी स्थिति में आती हैं, जिसमें उनकी अदला-बदली करने पर भी घड़ी में दिखाए जाने वाले समय में कोई फ़र्क नहीं पड़ता?

(2)

घड़ी के डायल पर 1 से 12 तक गिनती होती है। जरा अपनी गणित की महारत दिखाओ और डायल को ऐसे दो हिस्सों में बांटो कि प्रत्येक हिस्से में आने वाली संख्याओं का योग बराबर हो।



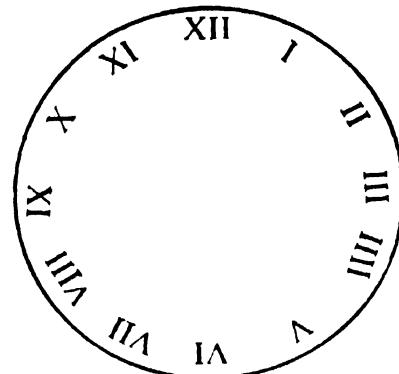
जब तुम इसे हल कर लो, तो डायल को छह हिस्सों में बांटो। पर इसमें भी एक शर्त है, प्रत्येक हिस्से में आने वाली संख्याओं का योग समान हो।

(3)

सुख्ख के पास दो रेत घड़ी हैं। एक चार मिनट की अवधि बताती है, दूसरी सात मिनट की। इन दोनों के सहारे दस मिनट की अवधि कैसे मापी जा सकती है?

(4)

आमतौर पर तो घड़ियों में अंक अंग्रेजी अंक लिपि में लिखे होते हैं। कुछ पुरानी घड़ियों में रोमन पद्धति में भी होते हैं। ऐसी ही एक घड़ी के डायल को चार हिस्सों में इस तरह बांटो कि प्रत्येक हिस्से की संख्याओं का योग 20 हो।

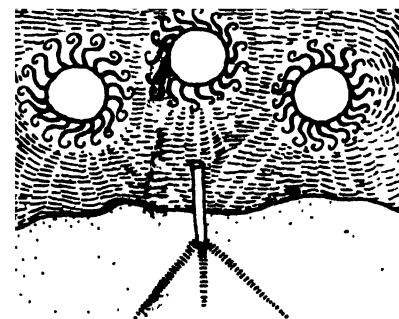


(5)

फ्ररवरी हर साल 28 दिन की होती है, पर चौथे साल 29 दिन की। तो बताओ चार साल में 28 तारीख वाले कितने महीने होते हैं?

(6)

अगर तुमने 'अपनी प्रयोगशाला' में दिया गया—'ज़मीन में गड़ी छड़ी की घड़ी' का प्रयोग किया है तो चित्र में दी पहली हल करो। चित्र में तीन अलग-अलग समय पर आकाश में सूर्य की स्थितियां दिखाई गई हैं। बताओ इन तीनों स्थितियों पर लगभग समय क्या था?



क्यों... क्यों... 6

मुनिया के बापू ने भारत दर्शन का कार्यक्रम बनाया। मुनिया तो खुशी से फूली नहीं समाई। तैयारी शुरू हो गई। रेल से जाने का विचार था। मुनिया की माँ ने ढेर सारा सूखा पकवान बनाकर रख लिया ताकि सफर के दौरान काम आए।

यात्रा शुरू हुई। मुनिया को बड़ा मज़ा आ रहा था। रेलों की भीड़ और उसके बाहर की भागती हुई दुनिया दोनों मज़ेदार थीं।

मुनिया के दिमाग में कोई सवाल आता तो वह बापू से पूछ लेती। अलबत्ता उसे माँ से ही डर लगता था।

उसने देखा कि जब भी कोई नदी आती माँ झट से बापू से पूछती, कौन सी नदी है? और उत्तर पाकर कभी चुप रह जातीं कभी अपने बटुए से एकाधि सिक्का निकालकर जल्दी से नदी में फेंक देतीं। मुनिया का

(7)

चलो एक सरल सवाल भी पूछ लेते हैं। घड़ी में कब ऐसी स्थिति होती है कि, जितने बजने वाले होते हैं, उतने ही मिनट की देर होती है।

(8)

अब इस क्रम में आखिरी सवाल! मान लो एक अप्रैल यानी मूर्ख दिवस को रात 9 बजे तुम सो गए। सोने से पहले तुमने सुबह उठने के लिए, घड़ी में सुबह 10 बजे का अलार्म लगाया। अलार्म बजा और तुम उठ भी गए। बताओ कुल कितने घंटे सोए?

(9)

चार के इन आठ अंकों से 500 को कैसे दर्शाया जा सकता है?

4 4 4 4
4 4 4 4

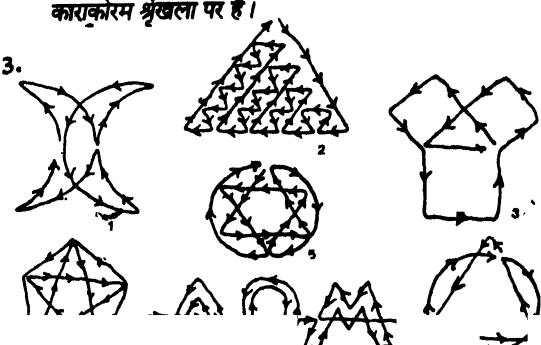
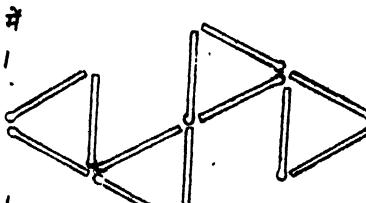
मन हुआ माँ से पूछे, क्यों फेंक रही हैं पैसे।

मुनिया ने बापू से पूछा। बापू बोले, बेटा फेंक नहीं रही हैं, चढ़ा रही हैं नदी को! मुनिया ने पूछा किसलिए? बापू बोले, यह तो अपनी अम्मा से ही पूछो।

मुनिया हिम्मत कर रही है पूछने की। तब तक तुम अपने आसपास खोजो इस सवाल का उत्तर। क्यों चढ़ाते हैं नदी में सिक्के? सिक्के तो आखिर पानी में डूब जाते होंगे? मिट्टी, पत्थर में दब जाते होंगे! क्या कारण हो सकते हैं?

तुम्हारे जवाब हमें 15 मई, 1991 तक मिल जाने चाहिए। लिफाफे, पोस्टकार्ड आदि पर 'क्यों.. क्यों.. 6' लिखना मत भूलना। और हां यह भी लिखना कि तुमने कैसे, किससे पता किया।

माथा पच्ची : हल, जनवरी अंक के

1. 9
2. सियाचिन स्लोशियर, जो हिमालय की काराकोरम श्रृंखला पर है।
- 3.
4. पूर्व में
5. 1:2।
- 6.
8. 12।
9. शुरू में कज़न होता है। क्योंकि उसमें अधजले कार्बन के कण होते हैं।
12. 8 घंटे।
13. छिपकली करी पानी की झरनत, भोजन में खाने वाले कीड़ों से प्राप्त पानी से पूरी हो जाती है।
14. 18।

क्यों.. क्यों.. १ :

पाठकों के उत्तर

सितंबर, 90 के अंक से शुरू हुए 'क्यों.. क्यों' संभ में सभी पाठक उत्साह से भाग ले रहे हैं। 'क्यों.. क्यों.. १' के जवाब में हमें 100 से ऊपर पत्र मिले हैं। सबाल शायद तुम्हें याद हो! चलो दोहराए देते हैं—बहुत से लोग जब खाना खाने बैठते हैं तो थाली के चारों तरफ पानी का एक घेरा-सा बनाते हैं। ऐसा क्यों किया जाता है?

कुछ पाठकों ने अपने जवाब में दो से अधिक कारण लिखे हैं। कुछ कारणों को उन्होंने धार्मिक भावना से जुड़ा बताया है और कुछ को वैज्ञानिक धारणा से। हमने उत्तरों के आधार पर सभी पत्रों को चार भागों में बांटा है।

1. भोजन को किसी की बुरी नज़र, बुरी आत्मा, अलाय-बलाय से बचाना और मन की शुद्धि के लिए ऐसा किया जाता है। ऐसे जवाब ७ लोगों ने भेजे।
2. अन्न धरती से मिलता है। कुछ लोग उसे भगवान की कृपा भी मानते हैं। अतः खाने से पहले भगवान तथा धरती को इस कामना के साथ भोग लगाते हैं कि यह भोजन हमें ऐसे ही मिलता रहे। 48 पाठकों ने यह मत व्यक्त किया।
3. खाने से पहले हाथ धोना चाहिए। आमतौर पर भारतीय घरों में ज़मीन पर बैठकर ही भोजन किया जाता है और अधिकांश घर मिट्टी के बने कच्चे फर्श वाले होते हैं, इसलिए थाली की जगह के आसपास की धूल दबाने के लिए ऐसा किया जाता है। ऐसा मानने वाले 26 पाठक हैं।
4. 37 पत्रों में यह विचार व्यक्त किया गया है कि ज़मीन पर बहुत से छोटे-मोटे कीड़े, चीटियां तथा सूक्ष्म जीवाणु होते हैं। भोजन की गंध पाकर वे थाली की ओर बढ़ते

हैं। थाली में पहुंचने से रोकने के लिए ही पानी का घेरा बनाया जाता है।

अब तुम पूछोगे इसमें से कौन-से उत्तर सही हैं? तो भई हम इस सही-गलत के झंझट में नहीं पड़ना चाहते। जैसा कि हमने सितंबर के अंक में ही कहा था किसी भी बात के कई कारण हो सकते हैं। अब कुछ कारण तुम्हरे सामने हैं। तुम अपने विश्लेषण से खुद ही तय करो।

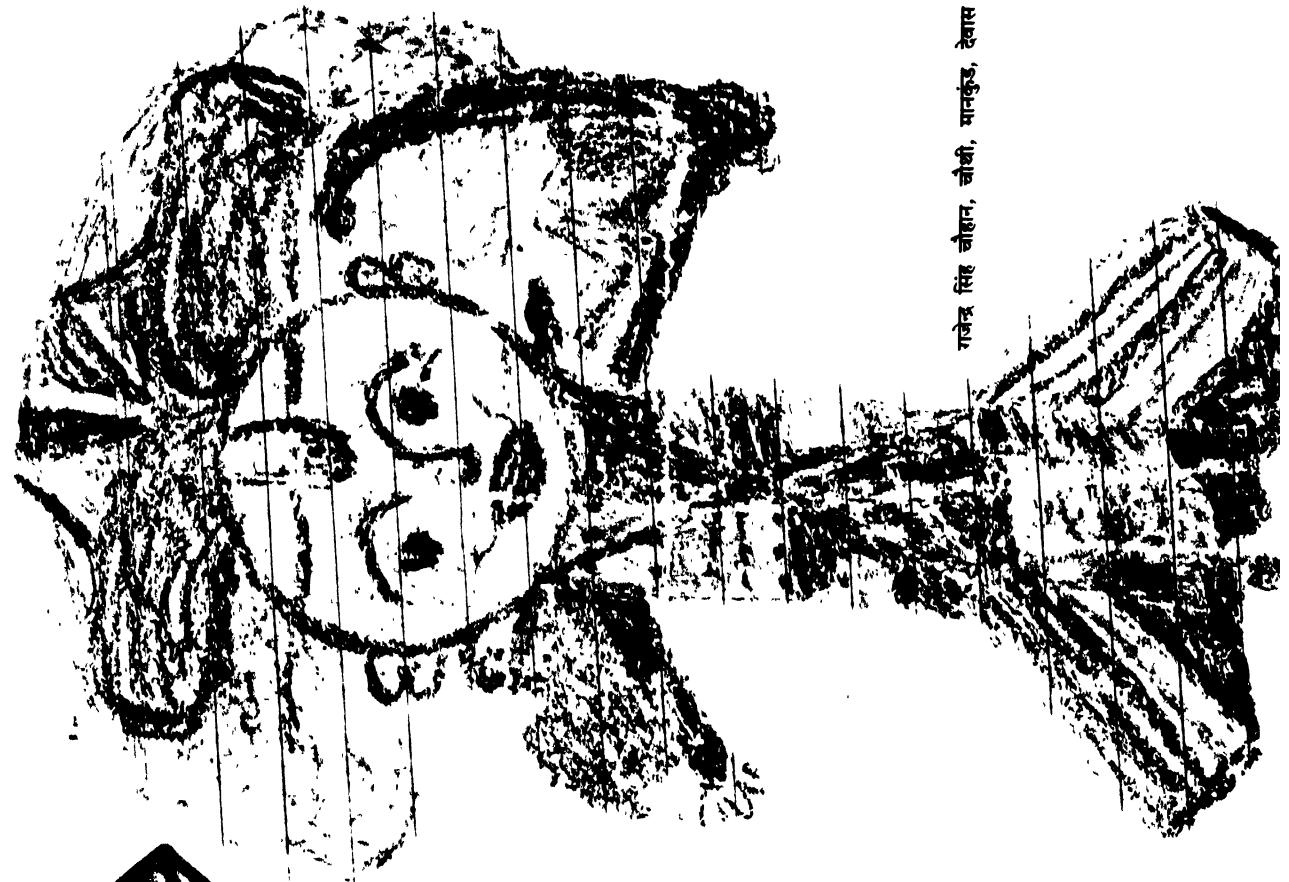
जिन पाठकों ने जवाब भेजे, उनके नाम हैं—विनया पुराणिक, धार। बीरेन्द्र अग्रवाल, सरगुजा। ऋतु मालविया, मनावर। सचिन खले, रजत अग्रवाल, आरती राय, सरेंद्र सिंह रघुवंशी, रीता अग्रवाल, अखिलेश मालविया, हरदा। विनोद बर्मा, मारधा। मुरलीधर कोसवाल। मुकेश कुशवाहा, करकरी, शहडोल। गौतम खड्डेलवाल, होशगाबाद। रजनी गुप्ता, एम के रायकवारा, इंदौर। राधेश्याम यादव, रायपुर। मुकेश, रायगढ़। रचना रघुवंशी, कीरतपुर। नीरजा सातपुरे, कावेर। गनपत प्रसाद, कर्णुआ। सीताराम, कुठिया मेहगांव। निकहत अफ्रोज, रचना बनर्हत, भोपाल। अनिलकुमार, मदनपुर। रामकुमार, श्यामकुमार, आलीराजपुर। परगंसिंह गहलोत, शुजालपुर मंडी। प्रणोद बोकील, ज़ाबुआ। सरोज बड़ोले, उज्जैन। एस. नागराज, बस्तर। ओम प्रकाश पायक, मंदसौर। अर्जुन सिंह दुर्ग। सभी प्र.प्र।

गणेशसिंह, सिवान। सुनील श्रीवास्तव, बगेन। हेमंत ठाकुर, ठाहर। रघुनाथ शर्मा, बसीडीहा। गणेश शर्मा, अखतवारा। अजय पाण्डे, देवबुर। मुकेश पाठक, लालगढ़। सुनीता विश्वकर्मा, बहुआर। ध्रुवसिंह, बामोर। श्याम किशोर शर्मा, कुर्जीबालपुर। रघुवेंद्र कुमार, परमजीवर। संतोष मिश्र, बिहिया। निर्मल कुमार गोयल, गोपाल अग्रवाल, सालिमपुर अहरा। ललन कुमार, गोपालपुर। आलोक, कुहुरानी, जुहुरानी, साहिबगंज। अरुण कुमार, चकसुरी। सीमा कुमारी, अमित कुमार, पटना। अखिलेश, लखनीबीचा, संतोष कुमार, नवहटा। सत्यसरोज, सीतामढ़ी। तैहिद जाहर, रिकाबगंज। राजेश, मुरारपुर। नीलम सिंह, सारण। विनोदसिंह, रोहतास। किशोर चंद, पालीगंज। अरुण शर्मा, नारायणपुर। अरविंद कुमार, सिसई। सोनू; गोपालगंज। प्रदीप कुमार, शंकरपुर इमामगंज। कुबेर शरण द्विवेदी, छपड़ौर। गंगाधर नारंग, जवाली। प्रभात श्रीवास्तव, जैधारी। सभी बिहार।

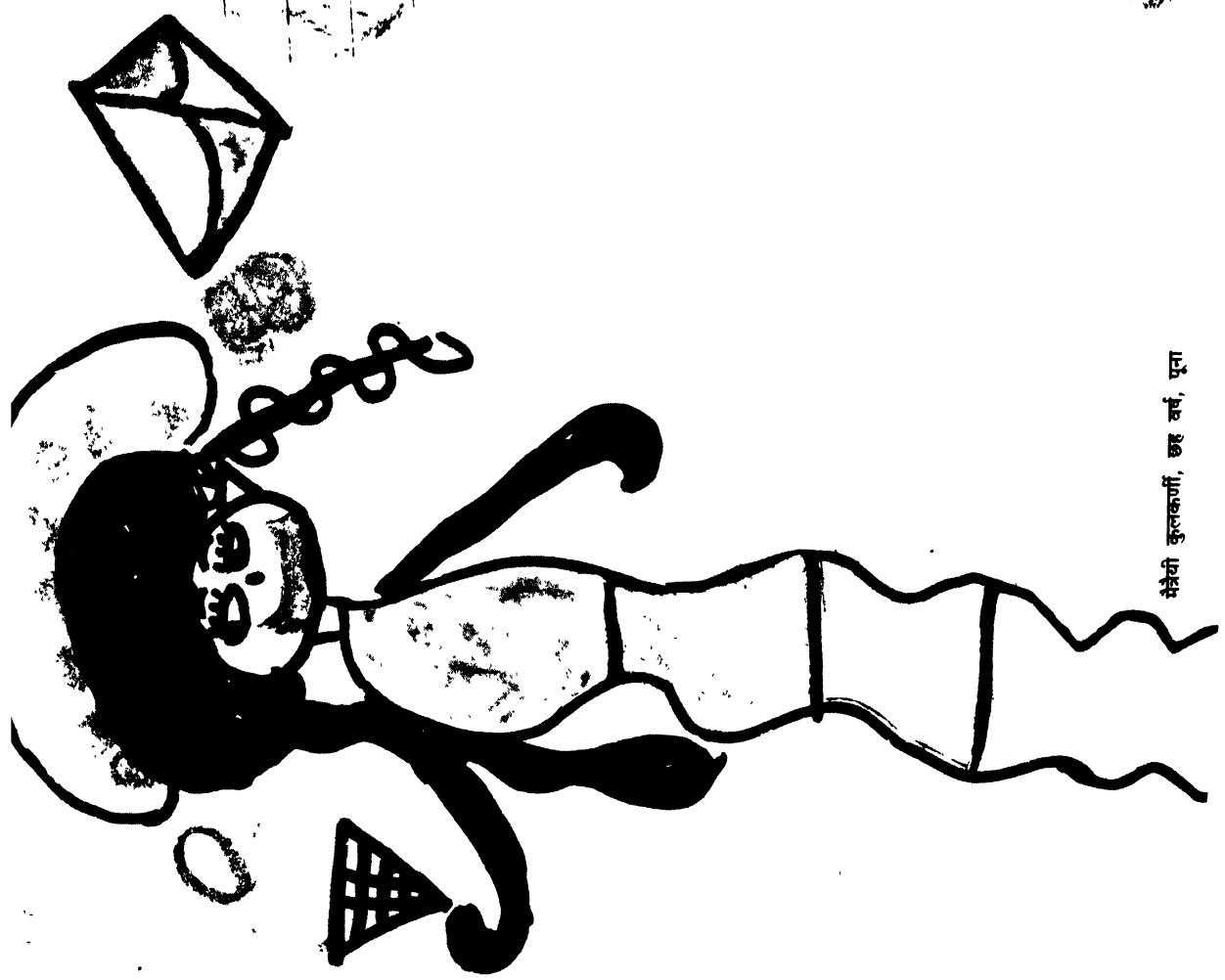
बृजेश पाण्डे, सुलतानपुर। रघुराज मोर्य, बढ़ियानी कस्तां। नीरजबर्मा, बिलग्राम। बारलकराम बर्ह, रामदासपुर मझोली। मेनिका अग्रवाल, गोण्ड। जयराम यादव, बरनर्ह। रामयश, बरैलिया। भगवान सिंह यादव, मीरामपुर। रामनवन, परसिया। नीतू, सचान, कझीज। आदित्य मिश्र, बिछलखा। डिकरसिंह, पजैना। गणेश शुक्ल, रायबरेली। ऋजेन्द्र बहादुर, इटावा। सभी उ.प्र।

हनुमन सहय यात्र, कमलेश अग्रवाल, पालड़ी। विजेन्द्र अग्रवाल, नैनेंद टाक, अजमेर। चेतराम जाट, जयपुर। टीकूराम छापरवाल, कीकरवाली। सुशील जोशी, देसरी। उजेन्द्र प्रसाद, किशनगढ़। जमना प्रजापत, बीकमेर। बगाराम चौधरी, खुडियाला। राजश्री बिजाणी, चुरू। सभी राजस्थान।

तरुण शर्मा, शहानाराय, राहुल नैथानी, दिल्ली। मेघना पाण्डे, पुरी।



गणेश सिंह चोहान, चोरी, मानकुड, लेवस



मंदिरी कुलकर्णी, छह वर्ष, पुना

1272

